अध्याय - चतुर्थ

अब्दुल बिस्मिल्लाह की कहानियों में अंतर्भुक्त चेतना का स्वरूप

कहानी आधुनिक काल की सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं प्रसिद्ध साहित्यिक विधा है जो कि अपनी वर्तमान प्रकृति, प्रवृत्ति, प्रतिमान और मानदण्ड में उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों में अस्तित्ववान हुई। इसे इस तरह से भी कहा जा सकता है कि भारतीय प्रायद्वीप के संदर्भ में एक विधा के स्वरूप में कहानी का साहित्यावतरण उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हुआ। पाश्चात्य साहित्यिक परिक्षेत्र में स्टोरी के नाम और रूप में प्रादुर्भुत होने वाली यह अधुनातन विधा अंग्रेजी भाषा और योरोप महाद्वीप से अपनी यात्रा आरम्भ करके भारतीय उपमहाद्वीप के पूर्वी भू-भाग के अंतर्गत आने वाले बंग प्रदेश (वर्तमान पश्चिम बंगाल और बांग्लादेश) में 'गल्प' नाम से प्रवेश करती है। जिस कालखण्ड में कहानी की साहित्यिक यात्रा बंगाल में पहुंचती है वह ब्रिटिश शासन का समय था और इस औपनिवेशिक शासन के प्रतिरोध में भारत का स्वाधीनता आन्दोलन संगठित एवं सक्रिय होने लगा था। यद्यपि स्वाधीनता आन्दोलन अभी अपने आरम्भिक सोपान पर ही थी लेकिन सन् 1857 ई॰ के प्रथम स्वाधीनता संग्राम ने कंपनी शासन की जड़े हिलाकर भारतीयों मे एक अभूतपूर्व राष्ट्रीय चेतना का संचार का दिया था जिसके परिणामस्वरूप देश के कोने-कोने में अंग्रेजी शासन के विरोध में प्रदर्शन और आन्दोलन होने लगा था।

भारत तुर्को एवं मुगलो के शासन के समय से लेकर व्यापारिक शासन अर्थात् कंपनी शासन की समाप्ति तक बंगाल सहित समस्त पूर्वी एवं पूर्वोत्तर भारत राजनीतिक और आर्थिक क्रियाकलापों का केन्द्र हुआ करता था और इन सभी राज्यों में होने वाली सभी राजनीतिक-आर्थिक गतिविधियों एवं क्रियाकलापों आदि का नेतृत्वकर्ता बंगाल ही था। दरअसल ब्रिटिश सरकार तिनकठिया प्रथा तहत चाय एवं कपास आदि की खेती पूर्वोत्तर भारत में ही करवाती थी। इंग्लैण्ड की औद्योगिक कांति के परिणामस्वरूप योराेप भारी

मशीनों का आविष्कार होने. तथा बड़े-बड़े कारखानों की स्थापना होने के बाद अंग्रेजों की कच्चे माल की आवश्यकता में भी अभूतपूर्व वृद्धि हो गयी थी। अपनी इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए ब्रिटिश सरकार अपने उपनिवेशों में जबरन चाय और कपास आदि की खेती करवाती थी। पूर्वोत्तर सहित समस्त भारत में उत्पादित होने वाले चाय, जूट, कपास आदि कृषिगत उत्पादों एवं अन्य खाद्यानों, मसालो तथा धातुओं आदि को कोलकाता बंदरगाह से ही योरप भेजा जाता था । इसीलिए अपने व्यापारिक हितो कार्यों को दृष्टिगत रखते हुए ब्रिटिश सरकार इस शहर की प्रशासनिक व्यवस्था पर विशेष ध्यान देती थी और योरप से आए व्यापारी एवं अधिकारी भी इसी आर्थिक राजधानी में निवास को प्राथमिकता देते थे।

अंग्रेजो की द्वैध शासन प्रणाली तथा बंगाल विभाजन जैसी स्वार्थी नीतियों ने बंगाल को बहुत अधिक प्रभावित किया जिसके परिणामस्वरूप बंगाल धीरे-धीरे स्वतंत्रता सेनानियों तथा क्रांतिकारियों की कर्मस्थली में परिणत होता गया। दरअसल बंगाल में रहते हुए ही अंग्रेजों द्वारा पूर्वी भारत में किए जाने वाले अत्याचारो का विरोध किया जा सकता था, और हुआ भी यही। जैसे-जैसे देश के विभिन्न भागों से विभिन्न पृष्ठभूमि से संदर्भित विद्वान विचारक, राजनेता और देशभक्त आदि बंगाल से जुड़ते गए वैसे-वैसे अंग्रेजों की दमनकारी आर्थिक तथा राजनीतिक नीतियो-व्यवहारों का पर्दाफाश हुआ, तथा लोगो देशभक्ति की भावना दृढ़ होती गयी, जिसका परिणाम संगठित रूप से किया गया स्वाधीनता आन्दोलन था।

व्यापारिक, राजनीतिक एवं आर्थिक उद्देश्यों से अंग्रेजो का प्रमुख अधिवास होने के कारण कोलकाता में ही पहले-पहल छापाखानों की स्थापना हुई। यद्यपि इन छापाखानो की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य ईसाईयत का प्रचार-प्रसार करना ही थी लेकिन इनकी स्थापना के बाद कोलकाता से ही हिन्दी, अंग्रेजी और बांग्ला भाषा मे समाचार पत्रो का प्रकाशन भी आरम्भ हुआ। इन छापादानों की स्थापना ने बंगाल में आर्थिक, राजनीतिक एवं प्रशासनिक

क्रियाकलापों के साथ-साथ साहित्यिक गतिविधियों को भी बढ़ावा दिया। इसका परिणाम यह रहा कि विश्व के किसी भी भू-भाग में तथा जीवन के किसी भी क्षेत्र में जो वैचारिक-व्यावहारिक क्रांतियाँ, परिवर्तन और घटनाएँ आदि घटित हुई, सभी का वैचारिक-सैद्धांतिक प्रभाव-प्रसार भारतीय उपमहाद्वीप तक बंगाल के रास्ते ही पहुँचा। इसे इस तरह से भी कह सकते हैं कि विश्व में होने वाले वैचारिक परिवर्तन, क्रांतियाँ, अवधारणाएँ-विचारधाराएँ आदि पहले-पहल बंगाल में ही प्रवेश करती थी और यहाँ से भारतीय प्रायद्वीप के अन्य भू-भागों में उनका भावात्मक प्रसरण होता था।

इसी सैद्धांतिकी के अनुरूप पाश्चात्य साहित्य के आधुनिक सिद्धांत, अवधारणाएँ, विचारधाराएँ, प्रवृत्तियाँ तथा घटनाएं आदि श्री बंगाल के, रास्ते ही भारत के अन्य भौगोलिक क्षेत्रों तक पहुंची। जैसा कि पहले ही संकेत किया जा चुका है कि विभिन्न कारणों से बंगाल विभिन्न पृष्ठभूमि से अंतरसंबंधित विद्वानों, विचारकों, क्रांतिकारियों तथा समाज सुधारकों आदि का पनी गर्भगृह एवं कोषागार बन चुका था। यहाँ वैश्विक परिवर्तनों, विचारों आदि को आत्मसात करने वाले मनीषी भी थे तो इन परिवर्तनों, विचारों व क्रांतियो आदि को प्रचारित-प्रसारित करने वाले समाचार पत्र भी थे। यही कारण या कि उन्नीसवीं तथा बीसवीं शताब्दी के अंग्रेजी साहित्य में जो नवीन परिस्थितियाँ, प्रवृत्तियाँ और परिवर्तन परिलक्षित हो रहे थे, भारतीय साहित्य में उनका सर्वप्रथम सैद्धांतिक वैचारिक प्रभाव बांग्ला साहित्य पर ही बड़ा। इसके बाद ही वे अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं के साहित्य तक प्रकीर्णित हुई। उदाहरणस्वरूप अंग्रेजी साहित्य में 'स्टोरी' या 'शॉर्ट स्टोरी' का प्रर्वतन आधुनिक काल में ही हुआ। यहाँ से प्रादुर्भूत होकर यह प्रथमत: बांग्ला साहित्य में गल्प के नाम से प्रवेश करती है, तत्पश्चात हिन्दी और मराठी साहित्य में इसका प्रवेश होता है। ध्यातव्य है कि जो आर्थिक, राजनीतिक, व्यापारिक और प्रशासनिक स्थिति बंगाल और कोलकाता की थी वहीं स्थिति मुम्बई और महाराष्ट्र की भी थी।

मुम्बई बंदरगाह भी अंग्रेजों का बहुत बड़ा अड्डा था इसलिए यहाँ भी अंग्रेज अधिकारियों के निवास, छापाखानो की स्थापना विद्वानों-विचारको का जमावड़ा वृहद स्तर पर होता था और इन सबका प्रभाव यह रहा कि मराठी साहित्य, समाज भाषा, और संस्कृति आदि पर भी पश्चिमी विचारों, सिद्धान्तों, परिवर्तनो घटनाओ आदि का प्रभाव प्रथमतः दृष्टिगोचर हुआ। आधुनिक भारतीय भाषाओ मे बांग्ला और मराठी भाषा के साहित्य पाश्चात्य साहित्यिक विचारों-सिद्धांतों के अनुकर्ता रहे है और यही कारण रहा है कि दलित विमर्श एवं स्त्री-विमर्श जैसी आधुनिक साहित्य की अवधारणाएँ मराठी साहित्यमे ही प्रादुर्भूत हुई। हिन्दी साहित्य भौगोलिक दृष्टि से बांग्ला साहित्य का अधिक समीपवर्ती रहा है इसलिए इस पर मराठी साहित्य की तुलना में बांग्ला साहित्य का अधिक प्रभाव रहा है। पश्चिमी साहित्य से कहानी एवं उपन्यास की अवधारणा लेकर बांग्ला साहित्य ने इसे शीघ्र ही हिन्दी साहित्य को भी दे दिया। हिन्दी भाषी क्षेत्र तथा हिन्दी साहित्य दोनो अपने उद्भव काल से ही नवीन सिद्धांतों, विचारों और प्रवृत्तियों आदि को अत्यधिक उत्साह-मूलक लेकिन नीर-क्षीर विवेकी दृष्टि से आत्मसात करता रहा है।

यद्यपि वर्तमान स्वरूपों एवं मानदण्डों पर आधारित कहानियों का प्रादुर्भाव आधुनिकाल में ही हुआ लेकिन कहानियों की सत्ता और अस्मिता मनुष्य की सत्ता तया अस्मिता के साथ ही सम्बद्ध रही है। अपनी सभ्यता के विकास के अनुक्रम मे मनुष्य ने अपने भावानुभावों तथा विचारों की अभिव्यक्ति के लिए प्रथमत: भाषा एवं लिपि का अनुसंधान किया, तत्पश्चात भौतिक जगत के प्रति अपनी जिज्ञासाओं के शमन हेतु वह नवीन अनुसंधानों में प्रवृत्त हुआ। इस अनुक्रम में वह प्रकृति के घटकों से संदर्भित काल्पनिक तथा प्राकृतिक घटनाओं परिवर्तनो क्रिया-कलापों से प्रेरित कहानियाँ कहता रहा। मनुष्य की काल्पनिक तथा कौतूहलिक मनोवृत्ति ने कालांतर में मनोविज्ञान से सामंजस्य स्थापित करते हुए कहानी कहने और सुनने को उसका स्वाभाविक प्रवृत्ति में परिवर्तित कर दिया। इसके अनंतर मनुष्य अपने सम्पूर्ण जीवनकाल में भिन्न-भिन्न समयों में भिन्न-भिन्न उद्देश्यों से कहानी

को कहता या सुनता रहा। समालोचक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में- "जिस प्रकार संगीत गाना और सुनना मनुष्य के स्वभाव के अंतर्गत है उसी प्रकार कथा-कहानी कहना और सुनना भी। कहानियों का चलन सभ्य-असभ्य सब जातियों में चला आ रहा है। सब जगह उसका समावेश शिष्ट साहित्य के भीतर हुआ है।"1

वस्तुत: काल्पनिकता की असीम संभावना, कौतूहलता की पराकाष्ठा, यथार्थपरकता, उपन्यास, नाटक आदि विधाओं की सापेक्षता में संरचनात्मक अथवा स्वरूपगत लघुता तथा अंतर्मन पर तीव्र प्रभविष्णुता आदि विशिष्ट प्रवृत्तियाँ कहानी विधा की ख्यातिलब्धता, सर्वस्वीकार्यता अथवा सार्वभौमिकता तथा सामाजिक प्रभावोत्पादकता को उत्कर्ष पर ले जाने वाले आधारिक अवयव हैं। इन्हीं घटकों की बुनियाद पर कहानी न केवल समाज में अपितु साहित्यिक परिक्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान सुनिश्चित करने में सफल रही है। दरअसल अपनी सार्वभौमिक प्रकृति में कहानी अनादिकाल से ही विश्व के सभी समाजों में अस्तित्वान रही है तथा भारतीय समाज के संदर्भ में इसकी परम्परा तो और भी प्राचीन रही है। वैदिककाल में लिखे गये सनातन हिन्दू धर्म ग्रंथों में राजाओं, राजकुमारों, सेनापतियों आदि के प्रेम, शौर्य, वैराग्य, ज्ञान, युद्ध कौशलता, न्यायिक दक्षता साहस, धैर्य, बल, बृद्धि, विजय, भूमि अधिग्रहण, कन्या अथवा स्त्री अपहरण, क्षमा, दानशीलता आदि से संदर्भित असंख्य कहानियाँ मिलती है जिनका कथानक घटना प्रधान, कोतूहल पूर्ण तथा प्रशंसात्मक प्रकृति का हुआ करता है।

गुणाढ्य कृत वृहत्कथा को कहानी विद्या की प्राचीनतम रचना कहा जाता है जिसमें राजा उदयन एवं वासवदत्ता की प्रेम कहानी के साथ-साथ राजाओं-राजकुमारों के बल-पराक्रम, राज-कुमारियों के शारीरिक सौंदर्य तथा समर्पण और समुद्री व्यापारियों के अदम्य साहस को कथावस्तु के केन्द्र में रखा गया है। वैदिक संस्कृति के बाद लौकिक संस्कृत साहित्य के अंतर्गत भी विभिन्न स्वरूपों वाली तथा विभिन्न विषयों से संदर्भित कहानियों की

रचना की जाती रही। दरअसल कथा-कथा ही होती है फिर चाहे वह उपन्यास की प्रकृति में विशाल संरचना वाली हो या फिर नाटक व कहानी के स्वरूप में लघु संरचना वाली-वह प्रत्येक दशा में कहानी ही रहेगी। अंतर बस इतना होगा कि यदि कहानी की स्वरूगत संरचना औपन्यासिक अथवा विशालकाय होगी तो उसमें एक से अधिक कहानियाँ सम्मिलित होंगी, जैसा कि उपन्यासों में केंद्रीय कथावस्तु के अतिरिक्त निधीय महत्व रखती है। वस्तुत: इसकी मूल प्रकृति तो नाटक की ही है और नाटक के रूप में ये सभी सर्जनाएँ संस्कृत साहित्य की अमुल्य निधियाँ है भले ही इनमें घृणा पर प्रेम की, असत्य पर सत्य की अधर्म पर धर्म की अन्याय, अनैतिकता, अनाचार पर न्याय नैतिकता व सदाचार की विजय दिखलाना ही रचनाकारों का प्रमुख उद्देश्य रहा हो। लेकिन क्योंकि इनमें उद्देश्य के अनुरूप कोई न कोई कहानी अवश्य अंतर्भुक्त रही है इसलिए आधुनिक संरचना और स्वरूपों वाली न होने पर भी इन्हें कहानियों की परम्परा से पूर्णत: बहिष्कृत ही किया जा सकता है। वर्तमान युगीन साहित्यिक परिक्षेत्र समालोचनात्मक मानदण्डों पर आधारित जिन्हें शुद्ध प्रकृति की कहानियाँ कहा जाता है, अंग्रेजी की 'स्टोरी' के प्रभाव से पहले ही इनकी पूर्व पीठिका संस्कृति की इन्हीं कहानियों पे निर्मित की थी, जिस पर इनका विधागत विकास हुआ- "इस स्वरूप के विकास के लिए कुछ बाते नाटकों की ली गई, जैसे- कथोपकथन, घटनाओं का विन्यास, वैचितय, बाह्य और आभ्यंतर परिस्थिति का चित्रण तथा उसके अनुरूप भाव-व्यंजना। इत्ति वृत्त का प्रवाह हो उसका मूल रूप या ही, वह तो बना ही रहेगा। उनमें अंतर इतना ही पड़ा कि पुराने ढंग की कथा-कहानियों में कथा का प्रवाह अखण्ड गति से एक ओर चलता था जिसमें घटनाएँ पूर्वापर क्रम में जुड़ती जाती थी।"3

एक स्वतंत्र विधा के रूप में आधुनिक काल में कहानी का विकास एक नवीन साहित्यिक घटना है, जो कि उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम वर्षो एवं बीसवीं शताब्दी के आरम्भिक वर्षों के बीच घटित हुई। इस घटना के मूल में पाश्चात्य साहित्यिक सिद्धांतों, समालोचनात्मक प्रतिमानों एवं कला संबंधी अन्य विचार-सारणियों की भारतिय साहित्य पर

प्रभावोत्पादकता थी दरअसल "योरप में जो नए ढंग के कथानक नावेल के नाम से चले और बंग भाषा में जाकर उपन्यास कहलाए (मराठी में वे कादम्बरी कहलाने लगे) वे कथा के भीतर की कोई भी परिस्थिति आरम्भ में रखकर चल सकते हैं और उसमें घटनाओं की श्रृंखला लगातार सीधी न जाकर सबका समाहार हो जाता है । घटनाओ के विन्यास की यह वक्रता या वैचित्र्य उपन्यास और आधुनिक कहानियों की वह प्रत्यक्ष विशेषता है जो उन्हें पुराने ढंग की कथा-कहानियों से अलग करती है। अंग्रेजी की मासिक पत्रिकाओं में जैसी छोटी-छोटी आख्यायिकाएँ तथा कहानियाँ निकला करती हैं वैसी कहानियों की रचना 'गल्प' नाम से बेग भाषा में चल पड़ी थी। ये कहानियाँ जीवन के बड़े मार्मिक और भावव्यंजक खण्ड चित्रों के रूप में होती थी। द्वितीय उत्थान की सारी प्रवृत्तियों (द्विवेदी युग की विशेषताओं) का आभास लेकर प्रकट होने वाली सरस्वती पत्रिका में इस प्रकार की छोटी कहानियों के दर्शन होने लगे।"4

आचार्य शुक्ल के उपर्युक्त सैद्धांतिक अभिकथन से स्पष्ट है कि आधुनिक साहित्य की सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं बहुप्रसिद्ध विधा मानी जाने वाली कहानी वस्तुतःअंग्रेजी साहित्य की ही देन है, जिसकी स्टोरी या नॉवेल को हिन्दी साहित्य ने अपने देशकाल एवं वातावरण की परिस्थितियों, जनता की चित्तवृत्तियों और जन आकांक्षाओं आदि के अनुरूप अनेक गौंण कहानियों की योजना की गई होती है। ये गौण अथवा सहायक कहानियाँ उपन्यास में कुछ दूर तक ही चलती हैं और फिर इनका समापन हो जाता है। इसी तरह यदि कहानी की स्वरूपगत संरचना होती होगी तो उसमें एक ही कथा विधान होगा, जैसा कि नाटकों और कहानियों में होता है। अभिकथन का तात्पर्य यह है कि नाटक और उपन्यास आदि भी एक तरह की कहानी ही होते हैं, बस इनका स्वरूप कहानियों की सापेक्षता में बड़ा तथा इनकी संरचनात्मक बनावट थोड़ा जटिल होती है। नाटक, कहानी और उपन्यास विधा में यदि अर्थगत संरचनात्मक और साहित्यिक समरूपता नहीं होती तो इनके कलात्मक तत्वों में इतनी अधिक एकरूपता दृष्टिगोचर नहीं होती। यदि नाटक और कहानी की समरूपता

संबंधी उपर्युक्त सिद्धांत को स्वीकार कर लिया जाए तो आचार्य दण्डीकृत दशकुमारचरितम्, महाकवि बाणभट्ट रचित कादम्बरी, सबन्धकृत वासवदत्ता, भारवि कृत किरातार्जुनीयम्, भवभूति विरचित उत्तररामचरितम्, महाकवि कालिदास प्रणीत अभिज्ञान शाकुन्तलम् व मालतीमाधवम् आदि कहानी की परम्परा के अंतर्गत रखने में कोई अतिशयोक्ति या असंगति नहीं होगी जो कि लौकिक संस्कृत के गद्य एवं पद्य में विरचित विशालकाय कहानियाँ हैं। इस कहानियों या नाट्य कहानियों, कहानियों की तुलना में हितोपदेश, पंचतंत्र, भोजप्रबंध, कथा सरितसागर, माधवानल एवं कामंदकला लघु आकार या संरचना वाली कहानियाँ हैं।

ध्यातव्य है कि इन कहानियों की स्वरुपगत संरचना छोटी होने के कारण ये कहानियाँ साहित्यिक और कलात्मक प्रकृति में परिवर्तित होती हुई प्रत्यक्षित होती है। ये सभी कहानियाँ घटना प्रधान एवं संवेदनात्मक प्रकार की है तथा इनमें पाठको को रमाने वाली प्रवृत्तियाँ भरपूर मात्रा में अंतर्भुक्त रही हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में- "घटना प्रधान और मार्मिक उनके ये दो स्थूल भेद भी बहुत पुराने हैं और इनका मिश्रण भी। बृहत्कथा, बैताल पचीसी, सिंहासन बत्तीसी इत्यादि घटनाचक्र में रसाने वाली कथाओं की पुरानी पोथियां हैं। कादम्बरी, माधवानल कामंदकला, सीत बसंत इत्यादि वृत्त वैचित्र्य पूर्ण होते हुए भी कथा के मार्मिक स्थलों में रमाने वाले भावप्रधान आख्यान है। इन दोनों कोटि की कहानियों में एक बड़ा भारी भेद तो यह दिखाई देगा कि प्रथम में इतिवृत्त का प्रवाह मात्र अपेक्षित होता है पर दूसरी कोटि की कहानियों में भिन्न-भिन्न स्थितियों का चित्रण या प्रत्यक्षीकरण भी पाया जाता है।"2 ध्यातव्य है कि उपर्युक्त विवेचन-विश्लेषण के अनुक्रम में वैदिक एवं लौकिक संस्कृत, में लिखी गई पौराणिक और साहिसिक कहानियों को भले ही हिन्दी कहानी की परम्परा से सम्बद्ध कर दिया गया हो लेकिन ये शुद्ध साहित्यिक स्वरूपों तथा अर्थवत्ताओं वाली न होकर मनोरंजन प्रधान, नीतिपरक, प्रशंसात्मक एवं उपदेशात्मक प्रकृति की ही है। क्योंकि साहित्य का केन्द्रीय उद्देश्य लोकमंगल ही होता है जबकि इन

कहानियों में लोकमंगल के विधायक घटकों का सर्वथा अभाव रहा है, इसलिए इन्हें शुद्ध साहित्य के अंतर्गत रखने में संकोच होता है। हालाँकि यह बात लौकिक साहित्य के अंतर्गत आने वाली रचनाओं पर रंचमात्र भी लागू नहीं होती है, क्योंकि संस्कृत साहित्य में ये रचनाएँ नाटक आदि के रूप में अपना परिवर्तित करके आत्मसात कर लिया है। लेकिन इनमें कोई संदेह नहीं है कि उपन्यास और छोटी कहानी दोनों के ढाँचे हमने पश्चिम से लिए हैं हालांकि वर्तमान युगीन हिदी कहानियों के उदभव संबंधी पाश्चात्य साहित्यिक प्रभाव के संदर्भ में विद्वान एकमत नहीं हैं।

आचार्य शुक्ल की एतद्विषयक स्रोत संबंधी पाश्चात्य: प्रभविष्णता वाली अवधारणा के नितांत विपरीत डॉ॰ रामकुमार वर्मा आधुनिक हिन्दी कहानी को शुद्ध भारतीय परम्परा का विकास मानते हैं। उनके अनुसार- "व्यापकता और प्रसार की दृष्टि से कहानी-कला का स्थान आधुनिक हिंदी साहित्य के समस्त प्रकारों में सर्वोपरि है। इस कला को वर्तमान युग की प्रतिनिधि धारा कही जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं। कहानी अपने साधारण रूप अर्थात् कथा, लघुकथा, आख्यायिका और आख्यानक आदि रूपों में प्राचीन भारतीय साहित्य का श्रृंगार है। इसकी परम्परा वैदिक साहित्य से आरम्भ होकर बौद्ध जातक, जैन कथाओं, प्राकृत कथा-साहित्य, प्राकृत, अपभ्रंश तथा हिन्दी के चारणकाल और मध्ययुग तक आती है। कहानी के इस भारतीय स्रोत ने कदाचित किसी समय समूचे संसार को प्रेरणा दी हो।"6

स्पष्ट है कि डॉ॰ रामकुमार वर्मा, आचार्य शुक्ल के मत के विपरीत भारतीय परम्परा की कहानियों से अंग्रेजी कहानियों की उत्पत्ति की संभावन व्यक्त करते हैं, जबकि शुक्ल जी अंग्रेजी कहानियों को आधुनिक हिंदी कहानियों का आधारिक स्रोत मानते हैं। कहानी की उद्भाविक प्रक्रिया के संबंध में सत्यता एवं तार्किकता दोनों विद्वानों के मतों में है। डॉ॰ रामकुमार वर्मा इसे भारतीय परम्परा से जोड़कर शुक्ल जी के विचारों की ही व्याख्या करते हैं, क्योंकि शुक्लजी ने भी कथासरित्सागर भोजप्रबंध, माधवानल, कामकंदला एवं पंचतंत्र

आदि संस्कृत रचनाओं को कहानी की परम्परा में ही रखा है। इसलिए दोनों विद्वानों के एतद्विषयक विचारों में किसी तरह का ईंधन ही समझना चाहिए। दोनों मतों में विभेद मात्र इतना है कि एक ने कहानी के उदभव-विकास की विवेचना करते समय इतिहास के अतिरिक्त वर्तमान का भी ध्यान रखा है जबकि दूसरे ने इस संदर्भ वर्तमान की अवहेलना करते हुए परम्परा के प्रति अतिरेकी अनुराग व्यक्त किया है। इसमें आचार्य शुक्ल का दृष्टिकोण आर्थिक साहित्यिक, मनोवैज्ञानिक और तार्किक प्रकृति का है जिसका कारण यह है कि उनकी मूल सर्जकीय प्रकृति समालोचक की थी और उन्हें समालोचना के माध्यम से आधुनिक कहानी के जिन एवं विवेचन संबंधी मानदण्ड निर्धारित करने थे इसलिए वे कहानी के भारतीय इतिहास के साथ-साथ अंग्रेजी साहित्य से प्रभावित वर्तमान की अवज्ञा नहीं कर सके। इसके। नितांत विपरीत डॉ० रामकुमार वर्मा इतिहास के प्रति कुछ अधिक आसक्त हो गए तथा इसे अतिशय अनुराग में वे अंग्रेजी की 'स्टोरी' का बांग्ला और हिन्दी साहित्य की कहानियों पर पड़े प्रभाव को पूर्णत: अस्वीकृत कर दिए। वैसे भी कहानी कला के वर्तमान तत्वों के आधार पर विवेचित-विश्लेषित करने अर्थात् कहानी के आधुनिक मानदण्डों की कसौटी पर कसने के बाद स्वर स्पष्ट हो जाती है कि बौद्ध जातक कथाएँ, संस्कृत साहित्य की बृहत्काय गद्यपरक नाट्य कथाएँ तथा प्राकृत, अपभ्रंश एवं चारणकालीन कथाओं की सापेक्षता में वर्तमान हिंदी कहानियाँ स्वरूप, संरचना, रचना-प्रक्रिया तथा उद्देश्य आदि स्तरों पर व्यापक विभेद रखती हैं।

आधुनिक साहित्य मीमांसा के द्वारा कहानी के सृजन एवं विवेचन के लिए जो मानदण्ड निर्धारित किये गए हैं, जिन्हें कहानी-कला तत्वों के नाम से जाना जाता है- वे आधुनिक युग की कहानियों में ही अपनी पूर्णता एवं वास्तविकता के साथ वर्तमान दिखाई देते हैं। कहानी कला के इन प्रतिमानिक तत्वों में कथानक, पात्र एवं चरित्र चित्रण, देशकाल और वातावरण, संवाद अथवा कथोपकथन, भाषा-शैली तथा उद्देश्य नामक छः घटकों को सम्मिलित किया गया है। ये मानदण्डीय घटक जिन वर्तमान कहानियों में एक-साथ दृष्टिगोचर होते हैं स्वरूप

एवं प्रक्रिया आदि में अंग्रेजी वे कहानियाँ संरचना, साहित्य के अंतर्गत लिखी जाने वाली आध्यापिकाओं से ही प्रेरित-प्रभावित है उन्ही के घटना-वैचित्र्य, पात्र-योजना, वस्तु-विन्यास तथा शिल्पगत प्रयोग आदि का अनुकरण है। इन्ही आख्यायिकाओं को बांग्ला साहित्य ने गल्प के नाम से स्वीकार करके कहानी लेखन के लिए हिन्दी साहित्य की ओर फेंक दिया डॉ० हरदयाल के शब्दों में- "आधुनिक काल में कहानी के लिए अनकूल भूमि हमारे यहाँ तैयार थी लेकिन पश्चिम में कहानी (शॉर्ट-स्टोरी) के जो प्रतिमान निर्धारित किए गए और जिनके आधार पर हमने कहानी संबंधी निर्णय करना प्रारम्भ किया वे पश्चिम से आए थे और वैसी कहानियाॅं लिखने की प्रेरण पश्चिम से ही आयी थी। पद्यपि इस प्रेरणा का माध्यम बंगाल में लिखी जाने वाली गल्पे बनी थी।"7

भिन्न-भिन्न भारतीय भाषाओं में लिखे गए साहित्य में कहानी को गल्प, आख्यायिका, आख्यानक, कथा आदि नामों से जाना जाता रहा है। दण्डी आदि प्राचीन संस्कृताचार्यो ने पहले काल्पनिकता, कौतूहलता, ऐतिहासिकता एवं वर्ण्य-वैचित्र्य आदि अवयवों की वर्तमान-निवर्तमानता, अधिकता-न्यूनता, तथा प्रधानता-गौणता आदि के आधार पर कथा और आख्यायिका में परस्पर तात्विक विभेद का होना स्वीकार किया था लेकिन उनके बाद के मीमांसको-विचारको ने कथा एवं आख्यायिका के बीच की असमानता को अस्वीकार करते हुए कहानी, गल्प, कथा, आख्यायिका और आख्यान आदि सभी के मध्य परस्पर तात्विक एकता बताकर इन्हें एक ही सर्जनात्मक, प्रकृति के पृथक-पृथक भाषाओं के भिन्न-भिन्न संज्ञावाचक नाम सिद्ध किया।

आधुनिककाल में भी डॉ॰ श्यामसुंदर दास एवं कथा-सम्राट मुंशी प्रेमचंद सरीखे अगणित विचारक ऐसे रहे हैं कहानी और आख्यायिका को एक ही मानते है। प्रेमचंद जी कहानी को गल्प की ही एक रचना मानते हैं। इसी तरह के और भी अगणित चिंतक-विचारक हैं, जिनकी कहानी संबंधी वैचारिकी, सैद्धांतिक एवं परिभाषा आदि का अध्ययन-

अनुशीलन करने के बाद स्पष्ट हो जाता है कि इस संदर्भ में डॉ°- दास और प्रेमचंद जी के मतों से लगभग सभी विद्वान सहमत है।

जैसे कहानी विधा के उद्भव, विकास, इसकी प्रवृत्तियों और कलात्मक तत्वों आदि के विवेचन-विश्लेषण की एक दीर्घ परम्परा रही है वैसे ही इसको पारिभाषित करने की भी सुदीर्घ परम्परा दृष्टिगोचर होती है। इस परम्परा में विभिन्न पृष्ठभूमियों से अंतर्निबंधित चितक-विचारक अपनी प्रतिभा, प्रज्ञा और समझ की सापेक्षता में कहानी को परिभाषा बद्ध करने का प्रयत्न करते रहे हैं। क्योंकि कहानी का वर्तमान साहित्यिक स्वरूप आधुनिक काल में ही सुस्थिर हुआ, इसलिए इसकी इसी कालखण्ड की परिभाषाओं का अध्ययन-अनुशीलन करना समीचीन प्रतीत होता है। इन पारिभाषिकों में भारतीय तथा अभारतीय दोनों प्रकार के सर्जन, विचारक, मीमांसक एवं चिंतक सम्मिलित रहे हैं। आधुनिक कहानी की संरचनात्मक प्रकृति, स्वरूपगत स्थिति उद्देश्य वाक्य-विन्यास, अन्विति, भाषा-शैली की महत्ता, कलागत तत्वों की स्थिति, अर्थ-वैशिष्ट्य, रचना-प्रक्रिया तथा भाव-संवेदना आदि को सम्पर्क रूप से समझने के लिए इन भारतीय-अभारतीय परिवेश में प्रचलित कहानी की परिभाषाओं का अध्ययन- विवेचन अपरिहार्य हो जाता है। इस दृष्टि से विभिन्न विचारकों द्वारा दी गयी कहानी की कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएं निम्नलिखित है-

1. डॉ° श्याम सुंदर दास के अनुसार- "आख्यायिका (कहानी) एक निश्चित सूक्ष्म या प्रभाव को लेकर लिखा हुआ नाटकीय आख्यान है।"8

2. प्रोफेसर गुलाब राय का मानना है कि- "छोटी कहानी एक स्वत: पूर्ण रचना है जिसमें एक तथ्य अभाव को अग्रसर करने वाली व्यक्ति केंद्रित घटना या घटनाओं के आवश्यक उत्थान-पतन और मोड़ के साथ पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालने वाला कौतूहल पूर्ण वर्णन हो।"9

3. चंद्रगुप्त विद्यालंकार के अनुसार- "घटनात्मक इकहरे चित्रण का नाम कहानी और साहित्य के सभी अंगों के समान 'इस' इसका आवश्यक गुण है।"10

4. हैडमिल्स की दृष्टि में- "कहानी की सबसे बड़ी विशेषता उसकी संक्षिप्तता है।"11

5. एडगर एलन पो की मान्यतानुसार- "लघुकथा एक सम्पूर्ण वर्णन है। यह इतनी लघु होती है कि एक ही बैठक में पढाई जा सकती है। यह पाठक पर एक प्रभाव डालने के उद्देश्य से लिखी जाती है, इसमें उन सब बातों का बहिष्कार होता है, जो उस प्रभाव को अग्रसर नहीं कर पाती हैं। यह अपने आप में स्वतःपूर्ण होती है।"12

6. बेल्स की दृष्टी में- "संक्षिप्त गल्प (क्रिएशन) का कोई भाग, जो बीस मिनट में पढ़ा जा सके लघुकथा होगी।"13

7. भैरवप्रसाद गुप्त के अनुसार- "कहानी की कोई एक बात या एक विशेषता हमारे मन में नहीं बसती बल्कि पूरी कहानी हमारे स्मृति पटल पर चित्रित रहती है, इसका कारण यह है कि (कहानीकार) एक बात विशेष या एक चरित्र विशेष के ईर्द-गिर्द कथानक के जाल नहीं बल्कि जीवन का एक जिंदा टुकड़ा ही उठाते है और उसे ही अपनी सहजकला से गढ़कर रख देते हैं।"14

8. अर्नाल्ड मैथ्यूज के अनुसार- "कहानी किसी एक चरित्र एकल घटना, एकल भावना या एकल परिस्थिति द्वारा उपयोग में लायी गयी भावनाओं की श्रृंखला से संबंध रखती है।"15

9. हडसन के शब्दों में- "कहानी में निश्चित रूप से एक और सिर्फ एक सूचनात्मक विचार होना चाहिए और उस विचार को इस तरह से विकसित किया जाना चाहिए कि वह पूर्णत: एकलक्ष्य के अनुरूप तर्कपूर्ण निष्कर्ष पर पहुंच सके।"16

10. चेखव के अनुसार- कहानी का कोई आदि मध्य और अंत नहीं होता, कहानी केवल कहानी होती हैं।"17

11. सेरा का अभिमत है कि- कहानी घटनाओं, अनुभवो और परिस्थितियों की सह-संबंधित तारतम्यता की एक सीमित श्रृंखला का कलात्मक निर्माण एवं सम्प्रेषण है जो सम्पूर्णता का अपना ही बोध रचती है।.... कहानी पृथक और संश्लिष्ट बोध से निर्मित तारतम्यता है।"18

12. छायावाद के ब्रहमा कहलाने वाले जयशंकर प्रसाद के शब्दों में- आख्यायिका में सौंदर्य की एक झलक का चित्रण करना और उसके द्वारा इसकी सृष्टि करना ही कहानी का लक्ष्य होता है।"19

13. अज्ञेय के अनुसार- इतना ही कहा जा सकता है कि कहानी नामक साहित्य प्रकार में एकांत प्रभाव ही साहित्यकार का उद्देश्य होता है और उसके द्वारा चुनी वस्तु उस उद्देश्य की प्राप्ति का साधन वह प्रभाव और उस प्रभाव की एकांतिकता ही मुख्य है।"20 कथा-सम्राट के नाम सुविख्यात मुंशी प्रेमचंद ने अपने अनेक लेखों, निबंधों आदि में कहानी को पारिभाषित किया है। उनके द्वारा दी गयी कहानी की कुछ परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं-

14. "उपन्यास, घटनाओं पात्रों और चरित्रों का समूह है, आख्यायिका केवल एक घटना है-अन्य बातें सब उसी घटना के अंतर्गत होती है.... कहानी वह ध्रुपद की तान है, उसमें गायक महफिल शुरू होते ही अपनी सम्पूर्ण प्रतिभा दिखा देता है एक क्षण में चित्त को इतने माधुर्य से परिपूर्ण कर देता है, जितना रातभर गाना सुनने से भी नहीं हो सकता है।"21

15. "वह एक ऐमा गमला है जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने स्वर समुन्नत रूप में दृष्टि गोचर होता है।"22

विभिन्न विद्वानों, विचारकों और सर्जकों द्वारा दी गयी कहानी की उपर्युक्त परिभाषाओं का अध्ययन-अनुशीलन करने के उपरांत प्राप्त निष्कर्षों को उपसंहारात्मक प्रकृति प्रदान करते हुए कहा जा सकता है कि यह साहित्येतिहास के आधुनिक कालखण्ड की सर्वाधिक

ख्यातिलब्ध एक ऐसी गद्य विधा है जिसमें एकल कथानक के माध्यम से किसी भावप्रधान, घटनात्मक और व्यक्ति केन्द्रित परिस्थितियों घटनाओं, चित्तवृत्तियों तथा भावानुभावों आदि को जिज्ञासा के आरम्भिक, माध्यमिक और अंतिम सोपानों के साथ काल्पनिक अथवा यथार्थपरक पात्रों की योजना द्वारा अभिव्यक्ति प्रदान की जाती है और जो प्रकृति संरचना एवं रचना प्रक्रिया में उपन्यासों व नाटकों से हो पृथक परंतु कलात्मक तत्वों से परिपूर्ण होती है। तथा इसे आधुनिक समालोचनात्मक मानदण्डों की कसौटी पर आसानी से कसकर देखा जा सकता है। कहानी का अर्थ, परिभाषा, रचना- प्रक्रिया और उद्भव विकास आदि का विवेचन-विश्लेषण कर लेने के उपरांत अब हिन्दी कहानी के विकास पर भी संक्षिप्त दृष्टिपात कर लेना समीचीन प्रतीत होता है।

हिन्दी कहानी का विकास-

हिन्दी कहानी की दीर्घकालिक विकास यात्रा को भलीभाँति समझने के लिए कथा-सम्राट मुंशी संशी प्रेमचंद के कहानीकार व्यक्तित्व एवं कहानी परक उसके धन अनन्य योगदान मानते को हुए इसकी समग्र यात्रा को निम्नलिखित चरणों में किया जा सकता है-

1. प्रेमचंद पूर्व युगीन कहानी (आरम्भिक कालीन कहानी)- बीसवीं शताब्दी के आरम्भिक कालीन कहानी आरम्भिक वर्षों से लेकर सन् 1915 ई॰ तक की समयावधि को कहानी की विकासात्मक दृष्टि से पूर्वयुग के रूप में जाना जाता है। यह समय हिन्दी कहानी के उद्भव का समय था और इसमें लिखि गयी लगभग सभी कहानियाँ अपनी-अपनी प्रवृत्तियों के अनुरूप हिन्दी की प्रथम कहानी होने की योग्यता रखती हैं। इस कालखण्ड में जितनी भी कहानियाँ, लिखीं गयी लगभग सभी को विभिन्न विद्वानो, समालोचको और विचारकों ने प्रथम कहानी होने के गौरव प्रदान किया है। प्रेमचंद पूर्व युग की प्रमुख कहानियों में किशोरीलाल गोस्वामी कृत इंदुमती और गुलबहार, माधवराव सप्रे की एक टोकराभर मिट्टी, मास्टर भगवान दास की प्लेग की चुडेल, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की ग्यारह वर्ष का समय,

बंगबहिला अर्थात् राजेन्द्र बाला घोष की दुलाईवाली एवं कुम्भ में छोटी बहू, गिरिजा दत्त बाजपेयी की पण्डित और पण्डितानी, चन्दुधरशर्मा गुलेरी की बद्धु का काँटा, सुखमय जीवन तथा उसने कहा था और वृन्दावनलान राखीबंद भाई सम्मिलित हैं ध्यातव्य है कि इसी कालावधि में प्रेमचंद जी कहानी की रचना संसार में अनेक कहानियों की रचनाएँ भी कर दी थी लेकिन अपनी निधीय महत्व वाली हिन्दी कहानियों की रचना द्वारा हिंदी संसार को देदीप्यमान करने का कार्य उन्होंने इस कालखण्ड के बाद ही किया।

2. प्रेमचंद युगीन कहानियाँ (हिन्दी कहानी का विकासकाल)- हिन्दी कहानियों की संख्यात्मक और गुणात्मक समृद्धि में प्रेमचंद जी के द्वारा प्रदत्त अन्यतम अवदान को दृष्टिगत रखते हुए हिंदी कथा-साहित्य के परिप्रेक्ष्य में सन् 1916 ई॰ से लेकर सन् 1936 ई॰ तक के समय प्रेमचंद युग के नाम से जाना जाता है। स्मरणीय है कि हिन्दी साहित्य में इस कालखण्ड को छायावाद युग नाम से अभिहित किया जाता है, जिसमें साहित्य की लगभग सभी विधाओं में मात्रात्मक तथा गुणात्मक दृष्टि से अभूतपूर्व समृद्धि देखी जा सकती है। इसमें भी कविता और कथा-साहित्य की श्री वृद्धि विशेष महत्व रखती है। प्रसाद, निराला, पंत, महादेवी वर्मा तथा राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना के अनेक कवि-कवयित्री इस समयावधि में जहाँ काव्य को प्रकर्ष पर पहुंचा देते हैं वहीं कथा-साहित्य के संदर्भ में प्रेमचंद जी यह कार्य अकेले ही कर देते हैं। लेकिन प्रेमचंद जी को इस कार्य में जय शंकर प्रसाद, पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र, जैनेन्द्र, सुभद्रा कुमारी चौहान और उषा देवी मित्र आदि सरीखे अनेक कहानीकारों का समानांतरीय सामाजिक और आदर्शोंन्मुख यथार्थवादी थी जो कि मानसरोवर शीर्षक से आठ भागों में संकलित हैं। इन कहानियों में ईदगाह, कफ़न, सद्गति, गुल्ली-डंडा, नमक का दारोगा, ठाकुर का कुआं, पूस की रात, सवा शेर गेहू, तथा सत्याग्रह आदि शीर्षक कहानियों सम्मिलित हैं। प्रेमचंद जी की आदर्शोंन्मुखी ययार्थवादी कहानियों के समानांतर प्रसाद जी सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक प्रकृति की कहानियों का सृजन कर रहे थे। तानसेन, चुड़ी वाली, भिखारिन, मधउआ, रसिया बालम, मृणालिनी, आकाशदीप, प्रलय,

जहाँ आंरा तथा की विजय आदि प्रसाद की प्रमुख कहानियाँ हैं। प्रेमचंद युग में ही पांडेय बेचन शर्मा उग्र की कहानियाँ भी विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगी थी जिनमें गाँधी आश्रम बलिदान, चिंगारियां ऑफ डेविल्स, सोसायटी, वह दिन, देशभक्त, दोजख, दिल्ली की बात, नरक, चाकलेट तथा खुदा के सामने आदि ख्यातिलब्ध कहानियाँ सम्मिलित है।

ध्यातव्य है कि उग्र जी की कहानियों का कथानक तद्युगीन सामाजिक विसंगतियों के साथ-साथ राष्ट्रप्रेम ही भावना को भी अभिव्यक्ति प्रदान करता है। विवेच्य कालखण्ड में ही कुछ ऐसे भी कहानीकार अपनी कहानियों के माध्यम से हिन्दी कहानी की विकास यात्रा में योगदान दे रहे थे जिनकी कथानकीय प्रतिमा को प्रेमचंद एवं प्रसाद की उत्कृष्ट रचनाधर्मिता ने आवरित कर लिया था ये कहानी-संसार में अधिक ख्याति अर्पित नहीं कर सके लेकिन ये कहानीकार भी प्रेमचंद-प्रसाद स्कूल के ही विद्यार्थी थे इसमे कोई संदेह नहीं है। इन कहानीकारों में आचार्य चतुरसेन शास्त्री, विनोद शंकर व्यास, चंडी प्रमाद हृदयेश, रायकृष्णदास तथा वाचस्पति पाठक आदि का नाम लिया जा सकता है है जो कि अपनी कहानियों में एवं प्रसाद् के कथानक शैली आदि का अनुकरण कर रहे थे जबकि विश्म्भरनाथ शर्मा कौशिक, राजेश्वर प्रसाद सिंह, विश्म्भरनाथ जिज्जा सुदर्शन, जो०पी० श्रीवास्तव, राजा राधिकारमन प्रसाद सिंह, पंडित ज्वाला दत्त शर्मा तथा भगवती प्रमाद बाजपेयी आदि कथाकार प्रेमचंद शैली के अनुसरण कर्ता थे।। हार की जीत, एथेंस का शरणार्थी, सच्ची शाँति (सुदर्शन) ताई, रक्षाबंधन, वह प्रतिमा (विश्म्भरनाथ शर्मा कौशिक) गाँधी टोपी, दरिद्र नारायण (राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह) तथा नूरजहाँ का कौशल, सिंहगढ विजय व दुखवा कासे कहूँ मोर सजनी (चतुरसेन शास्त्री) आदि प्रेमचंद, प्रसाद स्कूल में लिखी गयी प्रसिद्ध कहानियों हैं।

3.. प्रेमचंद-प्रसादोत्तर युगीन कहानियाँ (हिन्दी कहानी का उत्कर्ष काल)- सन् 1936 ई॰ में प्रेमचंद जी का परलोकवास होता है जिसके कारण इसी वर्ष से हिन्दी कथा-साहित्य का प्रेमचंद समाप्त होता है। प्रेमचंद जी के मृत्योपरांत अर्थात् सन् 1936 ई॰ से लेकर आजतक लिखी गई सभी कहानियों को प्रेमचंद-प्रसादोत्तर युगीन कहानियों के नाम से जाना जाता है। इस युग में कहानियों की विकास यात्रा गुणात्मकता के साथ-साथ मात्रात्मकता की दृष्टि से भी अपने उत्कर्ष को प्राप्त कर लेती है। इस कालखण्ड में जैनेन्द्र, अज्ञेय और यशपाल के द्वारा अपने व्यक्तिगत साहित्य-दर्शन और मनोविज्ञान के सहारे प्रेमचंद एवं प्रसाद की कहानी परम्परा को आगे बढ़ाया जाता है। यद्यपि इन तीनो कहानीकारों का कहानी लेखन के क्षेत्र में प्रवेश प्रेमचंद-प्रसाद के समय में ही हो गया था लेकिन एक कहानीकार के रूप में ख्याति इन्हें प्रेमचंद्रोत्तर युग में ही प्राप्त हुई। फाँसी, स्पर्धा, अपना-अपना भाग्य, एक कैदी, जय संधि, पाजेब, खेल, ग्रामोफोन का रिकार्ड, दृष्टिदोष, नीलम देश की राजकन्या, रत्नप्रभा तथा मास्टर जी आदि जैनेन्द्र की प्रमुख कहानियों हैं जो कि बाल संवेदना, मनोविज्ञान, सामाजिक विसंगति तथा स्त्री-पुरुष संबंध आदि का विशिष्ट शैली में सूक्ष्मातिसूक्ष्म वर्णन-विवेचन करती हैं।

इसी तरह व्यक्ति-चेतना के कहानीकार का अभिधान प्राप्त अज्ञेय वैसे तो प्रधानतः मनोवैज्ञानिक प्रकृति के कहानीकार है लेकिन भारत-विभाजन से जन्मी त्रासदी, स्त्री-पुरुष के बीच निरंतर जटिल होते संबंध, पारिवारिक अलगाव एवं एकाकीपन, संत्रास, विसंस्कृतिकरण एवं पश्चिमी पद्धति का रोमांस आदि नवीन एतद्युगीन विषय भी इनकी कहानियों की कथावस्तु में अपनी उपस्थिति दर्ज करवाने में सफल रहे हैं। छाया, अकलंक, विपथगा, मिलन, शरणदाता, लेटरबॉक्स, रमन्ते तत्र देवता, मेजर चौधरी की वापसी, बदला, मनसो, हरमिंगार, अमरबल्लरी, पहाड़ी जीवन तथा जिजीविषा आदि अज्ञेय की सुविष्यात प्रमुख कहानियाँ है। अज्ञेय एवं जैनेन्द्र के समानांतर ही प्रेमचंद जी की सामाजिक कहानियों की परम्परा को आगे बढाने में यशपाल जी की महती भूमिका रही है जिन्होंने

परदा, कुत्ते की पूँछ, फूलों का कुर्ता, धर्मरक्षा, प्रायश्चित, व्रत, दूसरा नरक, जीवदया, खच्चर, ज्ञानदान, उत्तमा की माँ, पराया सुख, भस्मावृत्त, खुदा की लड़ाई, तथा चिंगारी आदि विभिन्न प्रकार की सामाजिक, धार्मिक एवं साम्प्रदायिक विसंगतियों पर व्यंग्य करने वाली कहानियाॅं लिखी। इन तीनों कहानीकारों के अतिरिक्त उपेन्द्रनाथ अश्क, भगवती चरण वर्मा, रांगेय राघव, इलाचन्द्र जोशी, उषा देवी मित्रा तथा सुभद्राकुमारी चौहान आदि कहानीकारों ने भी प्रेमचंद-प्रसादोत्तर युगीन कहानियों को उत्कर्ष पर ले जाने में विशिष्ट योगदान दिया।

ध्यातव्य है कि विगत शताब्दी के छठे दशक में कविता, उपन्यास आदि की भाँति ही कहानी के क्षेत्र में भी विभिन्न प्रकार के साहित्यिक आन्दोलनों का प्रादुर्भाव होता है। जिनके परिणामस्वरुप नयी कहानी, साठोत्तरी कहानी, सचेतन कहानी, मध्य कहानी, समानांतर कहानी और जनवादी कहानी आदि कहानीगत आन्दोलनों का जन्म होता है। इन कहानी आंदोलनों को प्रेरित करने वाली सैद्धांतिकी या दार्शनिकता भले ही अत्यंत साधारण किस्म की रही हो परंतु इन नवीन आन्दोलनो-विचारधाराओं के अंतर्गत अनेक कहानीकारों ने कहानियाँ लिखकर हिंदी कहानी की गुणात्मकता एवं परिमाणात्मकता में आशातीत वृद्धि को सुनिश्चित किया। कहानी आन्दोलनों अथवा तद्युगीन नवीन साहित्यिक विचारधाराओं के पल्लवन-पुष्पन या पोषण-संरक्षण आदि के आधार पर वैसे तो बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से साहित्यावतरण करने वाले कहानीकारों को असंख्य वर्गो-उपवर्गो में विभाजित किया जा सकता है परंतु सामान्यीकृत रूप से इसकी कहानियों की कथावस्तु को दृष्टिगत रखते हुए इन्हें ग्रामीण या आँचलिक जीवन के कहानीकार तथा नगरीय जीवन के कहानीकार नामक दो वर्गो में विभक्त किया जा सकता है।

नगरीय जीवन के कहानीकारों की कहानियों में नगरी जीवन में व्याप्त संगतियों-विसंगतियों के चित्रण को कथानक को केन्द्र में रखा गया है। इस वर्ग के प्रमुख कहानीकारों

में मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, निर्मल वर्मा, कमलेश्वर, अमरकांत, भीष्म साहनी, मन्नू भण्डारी, उषा प्रियवंदा, कृष्णा सोबती आदि नाम लिया जा सकता है। इस संदर्भ में यहाँ यह स्पष्ट कर देना समीचीन प्रतीत होगा इस वर्ग के कहानीकारों को नगरीय जीवन के कहानीकार कहने का अभिप्राय यह नहीं है कि, उसकी कहानियों में ग्रामीण या आंचलिक जीवन सर्वथा उपेक्षित रहा है। दरअसल इनकी अधिकांश कहानियाँ नगरीय जीवन की स्थितियों-परिस्थितियों, संगतियों-विसंगतियों और चित्तवृत्तियों को अभिव्यक्ति प्रदान करने वाली हैं जबकि इनकी कुछ ही कहानियों के कथानक ग्रामीण जीवन से अंतर्तबंधित हैं। इसके विपरीत ग्रामीण या आँचलिक वर्ग के कहानीकारों ने अपनी-अपनी कहानियों में ग्रामीण जीवन की संगतियो-विसंगतियों के यथार्थांकन को अधिक महत्त्व दिया है। यद्यपि इस वर्ग के कहानीकारों ने भी नगरीय जीवन की स्थितियों-परिस्थितियों से संबंधित कहानियों लिखी हैं लेकिन इनके द्वारा लिखी ऐसी कहानियों की संख्या बहुत कम है।

इस वर्ग के कहानीकारों में नागार्जुन, फणीश्वरनाथ रेणु, अब्दुल बिस्मिल्लाह, शैलेश मटियानी, शिवप्रसाद सिंह, मार्कण्डेय तथा ज्ञानरंजन आदि का नाम सम्मिलित है जिनकी अधिकांश कहानियों के कथानक, पात्र और उन पात्रों का चरित्र, उनके संवाद तथा उनकी भाषा-शैली आदि सभी कलात्मक तत्त्वों में ग्रामीण जीवन की प्रवृत्तियाँ-परिस्थितियाँ दृष्टिगोचर होती हैं वैसे तो स्वाधीनता प्राप्ति के बाद लिखी गयी हिन्दी कहानियों में नितांत ग्रामीण या आँचलिक प्रकृति की कहानियों लिखने में फणीश्वर नाथ रेणु, अब्दुल बिस्मिल्लाह, बाबा नागार्जुन, मार्कण्डेय एवं शिवप्रताद सिंह विशेष रूप से सफल रहे हैं लेकिन इस संदर्भ में रेणु, बिस्मिल्लाह जी की सफलता अन्यतम और कालजयी किस्म की है। रेणु की ख्यातिलब्धता यहाँ आँचलिक कथाकार के रूप में रही है वहीं बिस्मिल्लाह जी सामाजिक प्रकृति के ग्रामीण जीवन से संबंधित कहानीकार हैं। वैसे हो नागार्जुन की बाबा बटेसरनाथ, कर्मनाशा की हार, मार्कण्डेय की आदर्श कुक्कुट गृह, भूदान पान-पूल, गुलरा के बाबा, जूते, नीम की टहनी, शिवप्रसाद सिंह की कर्मनाशा की हार तथा नन्हीं, दादी माँ, मूर्गे ने दी बाग,

दादी माँ, बिंदा महाराज, तथा रेणु की पंचलाइट, तीसरी कसम, रसप्रिया, एक आदिम रात्रि की महक, लालुपान की बेगम तथा श्रावनी दोपहरी की धूप आदि कहानियों भी ग्रामीण जीवन का प्रतिबिम्ब निर्मित करती है लेकिन इन कहानियों में ग्रामीण भारत के अल्पसंख्यक समाज को संगतियों-विसंगतियों को यथेष्ट अभिव्यक्ति नहीं मिल सकी है। जबकि बिस्मिल्लाह जी ने अपनी शादी का जोकर, त्राहिमाम, रक्षादूत, महामारी, रफ-रफ मेल, तूफानी पहलवान, तीसरी औरत, कैलेंडर, फ़ीडबैक, जीना तो पड़ेगा, चमगादड़, गोटी, बालकस्वामी, नायिका, गृहप्रवेश, दुलहिन, कर्मयोग तथा लंठ आदि शीर्षक कहानियों में ग्रामीण जीवन के अल्पसंख्यक तथा बहुसंख्यक दोनों समाजों की स्थितियों-परिस्थितियों के चित्रण को शाब्दिक फिल्मांकन तक ले जाने में सफलता अर्जित की है।

इसे सरल शब्दों में कहें तो कह कह सकते हैं कि नागार्जुन, रेणु, मार्कण्डेय एवं शिवप्रसाद सिंह आदि ग्रामीण या आँचलिक जीवन के कहानीकारों की कहानियों में जहाँ ग्रामीण हिन्दू समाज की विसंगतियों-विद्रूपताओं को ही अभिव्यक्ति मिल सकी है वही अब्दुल बिस्मिल्लाह की कहानियाँ प्रधानतः ग्रामीण जीवन के मुस्लिम समाज एवं गौणत: हिन्दू समाज की स्थितियों-परिस्थितियों के चित्रण से अंतसंबंधित रही हैं। इस संदर्भ में कहानियों में चित्रण के लिए समाज या वर्ग चयन का आधार कहानीकारों की सामाजिक-धार्मिक स्थितियाँ रही है अर्थात् जो कहानीकार जिस समाज या धर्म से संबंधित रहा है उसकी कहानियों की परिस्थितियों-प्रवृत्तियों के चित्रण की प्रधानता रही है। क्योंकि बिस्मिल्लाह जी मुस्लिम समाज-धर्म में ताल्लुक रखते हैं इसलिए इनकी कहानियों में भी इसी धर्म-समाज की प्रधान उपस्थिति रही है। परंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि बिस्मिल्लाह जी ने अपनी कहानियों में ग्रामीण जीवन के बहुसंख्यक समाज को सर्वथा उपेक्षित रखा है। दरअसल बाल्यकाल से लेकर शिक्षार्जन, नौकरी एवं साहित्य लेखन तक की सुदीर्घ यात्रा में व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों रूपों में हिन्दू समाज के साथ घनिष्ठता से अंतर्संबंधित रहे हैं, अतः स्वाभाविक है कि उन्होंने अपने उपन्यासों की भाँति ही कहानियों में भी की

प्रवृत्तियों-परिस्थितियों के चित्रण को यथावश्यक महत्ता अपरिहार्य रूप में प्रदान की हो। इसी तरह यहाँ एक और एक और स्पष्टीकरण दे देना समीचीन प्रतीत होता है कि बिस्मिल्लाह जी को सामाजिक प्रकृति का, ग्रामीण जीवन का कहानीकार कहने का यह आशय कदापि नहीं है की उन्होंने केवल ग्रामीण जीवन या सामाजिक जीवन की ही कहानियाॅं लिखी हैं तथा नगरीय जीवन या जीवन के अन्य पक्षों मसलन- राजनीति, धार्मिक, आर्थिक और सांस्कृतिक आदि की सर्वथा उपेक्षा कर दी है। जैसा की पूर्व में अभिकथित हो चुका है कि प्रत्येक देश का साहित्य अपने देश काल और वातावरण की परिस्थितियों प्रवृत्तियों एवं चित्र वृत्तियों आदि का स्वानुभूतिजन्य अभिव्यक्ति होता है।

जहाॅं अब्दुल बिस्मिल्लाह समकालीन नगरीय जीवन की स्थितियों-परिस्थितियों से भलीभांति परिचित रहे हैं वहीं ग्रामीण जीवन में निवास करते हुए सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक विसंगतियों से भी इनका अभीष्ट साक्षात्कार हो चुका है। ऐसे में स्वाभाविक है कि साहित्य की इस सर्वाधिक ख्यातिल्लब्ध आधुनिक विधा में भी उन्होंने इस जिवनगत विविध विसंगतियों को यथेष्ट अभिव्यक्ति प्रदान की हो। इसलिए जब हम बिस्मिल्लाह जी को सामाजिक प्रकृति का ग्रामीण जीवन से सरोकार रखने वाला कहानीकार कहते हैं तो इसका यह अभिप्राय यह नहीं है कि उन्होंने अपनी कहानियों में जीवन के विविध पक्षों के साथ-साथ नगरी जीवन की स्थितियों-परिस्थितियों के चित्रण को भी सर्वथा उपेक्षित रखा है। दरअसल समसामयिक परिवेश में ग्रामीण जीवन की सामाजिक परिस्थितियाॅं अत्यधिक जटिल रही है और ग्रामीण पृष्ठभूमि से जन्मना अंतर्संबंधित होने के कारण बिस्मिल्लाह जी इन्ही जटिलताओं में रम से गए हैं जिसके कारण चाह कर भी उन्हें दूसरे जीवन क्षेत्र पर उन्हें समान रूप से दृष्टिपात करने का अवसर नहीं मिल सका।

अब्दुल बिस्मिल्लाह की कहानियों में अंतर्भुक्त यह विधिध विषय एवं बहुउद्देशीय चेतना कहानी कला के सभी तत्वों में बहुलता के साथ दृष्टिगोचर होती है ध्यातव्य है कि

साहित्य की उपन्यास विधा की तरह ही आधुनिक साहित्य की सर्वाधिक चर्चित कहानी विधा भी छः कलात्मक तत्वों से परिपूर्ण होती है। कहानीकला के इन तत्वों में कथावस्तु, पात्र और चरित्र चित्रण, संवाद अथवा कथोपकथन, देशकाल और वातावरण, भाषा शैली एवं उद्देश्य नामक घटक सम्मिलित होते हैं जिनका संक्षिप्त परिचय अग्रलिखित प्रकार से है-

1. कथानक- कहानीका प्रमुख या आधारिक तत्त्व होता है जो कि किसी घटना, विषय तथा भावानुभाव आदि को विषय-वस्तु बनाकर कहानी कहने या लिखने की आधारशिला रखता है। इस तरह से किसी कहानी में भाव, विचार, घटनाव्यापार आदि विषय के रूप में जो कुछ भी कहा जाता है वह सब कथानक के अंतर्गत ही आता है। क्योकि उपन्यास की समतुल्यता में कहानी लघु स्वरूपवाली विधा होती है इसलिए इसमें प्रधान या मुख्य कथानक का विधान होता है। इससे इस तरह से भी कह सकते हैं कि कहानी में उपन्यासों की तरह उप कथानक, सहायक कथानक या गौणकथानक के विधान का कोई अवकाश नहीं होता है। कहानी की प्रकृति और संरचना अत्यधिक छोटी होने के कारण इसकी कथावस्त में आदि से लेकर अंत तक एक ही मुख्य या प्रधान कथा को विस्तार दिया जाता है। कहानी का कथानक आदि में अंत तक एक ही मुख्य प्रधान कथा को विस्तार दिया जाता है। कहानी का कथानक आदि में जिज्ञासाओं को प्रादूर्भूत करने वाला, मध्य में जिज्ञासाओं को विस्तार देने वाला तथा अंत में जिज्ञासाओं का उद्देश्य के सापेक्ष शमन करने वाला होता है। कहानी का कथानक एक तरह से कहानी का शरीर होता है जिसमें विभिन्न प्रकार की घटनाओं, क्रिया-व्यापारी, भाव-संवेदनाओं, परिस्थितियों, चित्तवृत्तियों एवं संगतियों-विसंगतियों आदि की अभिव्यक्ति अंतर्भुक्त होती है।

2. पात्र एवं चरित्र-चित्रण- कहानी कला का दूसरा सर्वाधिक महत्त्वषर्ण तत्त्व पात्र एवं उनका चरित्र-चित्रण होता है। कहानीकार अपनी कहानियों के कथानकों में उल्लिखित घटनाओं, विषयों, भावानुभावों, प्रवृत्तियों, परिवर्तनों परिस्थितियों तथा चित्तवृत्तियों आदि के

समय और परिवेश को ध्यान में रखते हुए पहले-पहल पात्रों की कल्पना करता है तत्पश्चात कहानी के उद्देश्य के अनुरूप वह चयनित पात्रों का चरित्र निर्मित करता है। जब कहानी में देशकाल एवं वातावरण तथा उद्देश्य के सर्वथा सापेक्ष पात्रों की योजना अथवा उनका चारित्रिक विकास सुनिश्चित किया गया हो तभी कहानी और कहानीकार दोनों को आधुनिक कहानी समीक्षा के मानदण्ड़ों पर सफल माना जा सकता है। कहानी के कथानक से संबंध रखने वाले देशकाल और वातावरण की परिस्थितियों प्रवृत्तियों घटना-व्यापारों या मनोवृत्तियों से असंपृक्त पात्रों का चारित्रिक विकास दिखाने वाली कहानियाँ और कहानीकार साहित्य मीमांसा की दृष्टि से हास्यास्पद एवं अनुपयोगी हैं तथा कहानी अपने उद्देश्य से भी असम्बद्ध हो जाती है। किसी कहानी में एक या एक से अधिक पात्रों की योजना की जा सकती है लेकिन कहानी के पात्रों की संख्या उपन्यासों और नाटकों में कल्पित पात्रों की समतुल्यता में बहुत कम होती है तथा प्रत्येक पात्र उद्देश्य की पूर्ति में सहायक व प्रासंगिक होते हैं। पात्रों की योजना और उनके चारित्रिक विकास के बाद कहाली व्यक्ति केन्द्रित लगने लगती है लेकिन वास्तव में वह किसी विषय या देशकाल एवं वातावरण विशेष के अंतर्गत आने वाले व्यापक जनसमुदाय की स्थितियों-परिस्थितियों की ही कहानी होती है जिसे कुत्सित पात्रों के माध्यम से अभिव्यक्ति प्रदान की जाती है। कहानी में पात्रों के विधान द्वारा उनकी अधिसंख्या, चारित्रिक विविधता एवं स्वानभूतियों आदि में समरूपता स्थापित करते हुए पात्र और उनके चरित्र आदि का साधारणीकरण किया जाता है। इस दृष्टि से कहानी के पात्रों के भावानुभावों, विचारों तथा उनकी भाषा व वेशभूषा आदि का उनके स्थानीय प्राकृतिक परिवेश, सांस्कृतिक परम्परा तथा आँचलिक जीवन आदि की सर्वथा संगति में होना अपरिहार्य होता है।

3. देशकाल और वातावरण- क्रम एवं महत्व दोनों दृष्टि से देशकाल और वातावरण कहानीकला का तीसरा सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्त्व होता है जिसमें देश का अभिप्राय स्थान से, काल का अर्थ समय से तथा वातावरण से तात्पर्य परिवेश से होता है। कहानीकार अपनी

कहानियों की कथावस्त का निर्माण करने के लिए अपने समय के परिवेश, युगीन-परिस्थितियों तथा मनोवृत्तियों आदि का ही आधार स्वरूप प्रयोग में लाता है। इसी सैद्धांतिकी के आधार पर कहानी सहित सभी साहित्यिक विधाओं में देशकाल और वातावरण की भूमिका अनिर्वचनीय बन जाती है जिसकी बुनियाद पर ही साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। दर्पण की तरह ही कहानीवार भी अपने देशकाल और वातावरण में जो कुछ भी देखता या अनुभव करता है उसी में कल्पना एवं यथार्य का मिश्रण करते हुए उस कहानी में शब्दों के माध्यम से प्रतिबिम्बित करता है। एक कलागत तत्त्व की प्रकृति में प्रत्येक कहानी में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रुप से या फिर कम-ज्यादा मात्रा में देशकाल एवं वातावरण अपरिहार्य रूप से वर्तमान रहता है और इसकी यह उपस्थिति आवश्यक भी होती है। वस्तुत: देशकाल और वातावरण ही वह घटक होता है जिसमें किसी स्थान एवं समय विशेष के अंतर्गत आने वाली सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक एवं आर्थिक विसंगतिया, परंपराएं, जीवनानुभव, मान्यताएं, परिस्थितियाॅं, रीति-रिवाज, मनोवृत्तियाॅं, नैतिकताए, एवं मूल्यादर्श सम्मिलित होते हैं। वातावरण से अभिप्राय पर्यावरण से ही होता है जिसके अंतर्गत किसी स्थान विशेष की भौगोलिक, प्राकृतिक परिस्थित, उसमें निवास करने वाले बहुविध प्राणी, विविध प्रकार की वनस्पतियाॅं, पेड़-पौधे, पर्वत, वन, नदी, मानव समुदाय, मनुष्यों की जीवनी स्थितियाॅं, उनकी सामाजिक अतःक्रियाएं, सांस्कृतिक विशिष्टताएं तथा जीवनानुभव आदि आते हैं। इस तरह से देश काल और वातावरण के माध्यम से ही किसी स्थान और समय विशेष के जीवन को संपूर्णता तथा व्यापकता के साथ जाना समझ जा सकता है, जो की एक साहित्य सृजन के लिए अपरिहार्य होता है।

4. संवाद या कथोपकथन- संवाद या कथोपकथन कहानीकला का चौथा तत्त्व होता है जिसके माध्यम से कहानी के कथानक एवं उसमें कल्पित पात्रों का चारित्रिक विकास किया जाता है। इस तरह से संवाद या कयोपकथन की अनुपस्थिति में न तो कहानी की कथावस्तु

को ही विस्तार प्रदान किया जा सकता है और न ही उसके पात्रों को चरित्र-चित्रण ही किया जा सकता है। यद्यपि कहानी में संवाद अधिकांशतः दो पात्रों के मध्य ही होता है लेकिन कभी-कभी नाटकों की और कहानियों में भी आत्मगत या स्वगत प्रकार के संवादों का प्रयोग किया जाता है। दरअसल कहानी में पात्रों के वैचारिक-मानसिक द्वंद्व को दिखाने के लिए कहानीकार आत्मगत प्रकार के संवाद की योजना करता है जिसमें पात्र व्यक्ताव्यक्त रूप से स्वयं ही करते हैं और स्वयं ही व्यक्त या अव्यक्त रूप से उसका उत्तर-प्रतित्यत्तर भी दे देते हैं। कहानी में दो पात्रों के माध्यम से होने वाले संवाद या कथोपकथन बल्कि संवादों की प्रकृति मझोले किस्म की होनी चाहिए। कहानी में जहाँ कहानीकार स्वयं एक पात्र के रूप में परिस्थितियों या घटनाओं का विवेचन-विश्लेषण कर रहा है वहाँ संवाद या कथोपकथन अपेक्षाकृत अधिक लम्बे हो सकते हैं। लेकिन कहानी में प्रत्येक प्रकार के संवादों का उससे संबंधित पात्रों एवं उनके चरित्रों तथा देशकाल और वातावरण आदि की समरूपता में होना अपरिहार्य होता है। कहानी में जिस स्थान, समय, परिवेश एवं पृष्ठभूमि से सरोकार रखने वाले पात्रों का चारित्रिक विधान किया जाय तथा कहानी का जो केन्द्रीय उद्देश्य हो, उसी के अनुरूप संवादों या कथोपकथनों की योजना की जानी चाहिए। अभिकथन का तात्पर्य यह है कि कहानी के संवाद या कयोपकथन का कहानी कला के अन्य किसी भी तत्त्व से रंचमात्र भी विभेद नहीं होना चाहिए। इसी तरह व्यक्त प्रकृति के संवादों अर्थात् दो पात्रों के मध्य होने वाले संवादों या कथोपकथनों से संवाद करने वाले पात्रों की चेष्टाओं भावभंगिमाओं तथा मनस्थितियों आदि का भी अभिज्ञान होना चाहिए।

5. भाषा-शैली- कहानी कला का पाँचवा प्रतिमानिक तत्व भाषा-शैली होती है जो कि कहानी के पात्रों की स्थिति, अनुदेशकाल और वातावरण तथा संवाद आदि के समरूप या संगति में होती है। किसी कहानी में प्रयोग में लायी जाने वाली भाषा उस कहानी में कल्पित पात्रों की प्रकृति, चरित्र, समय तथा परिवेश आदि के अनरूप होनी चाहिए नहीं तो कहानी यथार्थपरक नहीं बन पाएगी। कोई कहानीकार यदि अपनी कहानी में ग्रमीण पृष्ठभूमि से

संबंधित अशिक्षित प्रकृति के पात्रों की योजना करके उससे अंग्रेजी भाषा में संवाद का विधान करेगा तो वह कहानी अस्वाभाविक एवं हास्यास्पद बन जाएगी। कहानी की भाषा अधिकांशत: पात्रों की प्रकृति पर ही निर्भर करती है। यदि कहानी का पात्र शिक्षित एवं शहरीय परिवेश से संबंधित होगा तो उसकी भाषा तत्सम प्रधान होने के साथ-साथ विदेशी भाषा के शब्दों की प्रचुरता वाली होगी। इसके विपरीत यदि पात्र ग्रामीण पृष्ठभूमि से संबंधित तथा अशिक्षित प्रकृति का होगा तो उसकी भाषा में देशज एवं स्थानीय बोली के शब्दों अश्लील शब्दों तथा शब्दों के विकृत रूपों की भरमार होगी। इस तरह के पात्र अधिकांशतः टूटी-फूटी तथा भाषा-विज्ञान एवं व्याकरण की दृष्टि से अशद्ध भाषा का प्रयोग करते हैं। भाषा की तरह ही शैली अर्थात् कहानी कहने का ढंग या तरीका भी पात्रों की प्रकृति एवं उनके देशकाल और वातावरण के सापेक्ष होती है। पात्र यदि पढ़े-लिखे अर्थात् शिक्षित होंगे तो उनकी अभिव्यक्ति शैली सहज, सरल तथा प्रवाहमयी होगी और वे अपने संवादों या कथोपकथन में ज्यादातर विवेचनात्मक विश्लेषणात्मक अथवा व्याख्यानपरक शैली को व्यवहार में लाएंगे। जबकि अशिक्षित कोटि के पात्रों की कोई निर्धारित शैली नहीं होती है। भाषा की तरह इनकी शैली में स्थानीयता की प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है तथा ये प्रत्येक बात या विषय को सरलीकृत करके स्थानीय लहजे में व्यक्त करते हैं। वस्ततःकहानी कला के अन्य दूसरे तत्त्वों की भाँति ही आपकी भाषा-शैली नामक तत्त्व भी कहानी के उद्देश्य तथा कहानीकार की अभिव्यक्ति सामर्थ्य, योग्यता तथा ज्ञान आदि पर निर्भर करता है। कहानीकार की सृजनशीलता जितनी अधिक उत्तम किस्म की होगी तथा वह जितना अधिक नवोन्मेषशालिनी प्रज्ञाजन्य प्रतिभा का संपोषक होगा, उतना ही अधिक भाषा-शैली के समुचित, उपादेय तथा प्रासंगिक प्रयोग में सफल हो सकेगा। यदि कहानीकार स्वयं प्रतिभाविहीन होगा तो किस प्रकार के पात्र से किस परिवेश में किस तरह की भाषा-शैली का प्रयोग करवाना है समुचित निर्णय नहीं ले पायेगा।

6. उद्देश्य- वैसे तो क्रम की दृष्टि से उद्देश्य कहानी कला का अंतिम तत्व होता है लेकिन महत्व की दृष्टि से कहानी-कला के सभी तत्त्वों में यह प्रथम स्थान पर आता है। यदि कथानक को कहानी का शरीर कहा जाए तो उद्देश्य को उसका प्राण कहने में किसी भी तरह की अतिशयोक्ति नहीं होगी दरअसल उद्देश्य, कहानीकला के अन्य तत्वों का नियंत्रक और निर्धारक होता है। कारण यह है कि प्रत्येक कहानी कहने या लिखने के पीछे कहानीकार का एक निश्चित और स्वाभाविक उद्देश्य अवश्य होता है तथा इसी उद्देश्य के अनुरूप अथवा इसकी पूर्ति योग्य कथानक, पात्रों का चयन और उनका चारित्रिक विकास देशकाल और वातावरण, संवाद या कथोपकथन तथा भाषा-शैली आदि की योजना करता है। इससे स्वतःसिद्ध होता है कि कहानीकला का यह प्रतिमानिक तत्व अंतिम होते हुए भी पहले के पाँचो मानदण्डीय घटकों का नियंत्रक और निर्धारक होता है। ऐसे में कहानीकार द्वारा कहानी में उद्देश्य की उपेक्षा करने या इसकी ओर कम ध्यान देने से उसकी कहानी अप्रासंगिकता अपूर्णता एवं असंतुलन का शिकार हो जाएगी।

कहानी का उद्देश्य निर्धारण कथाकार की स्वानुभूतियों उसकी सामाजिक स्थितियों-परिस्थितियों और मनोवृत्तियों के अनुरूप निर्मित होता है। कहानी लिखने या कहने के लिए कहानीकार अपने देशकाल और वातावरण से संबंधित जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में परिव्याप्त संगतियों-विसंगतियों को ही उद्देश्य का धार बनाता है। ऐसे में उसकी कहानी का उद्देश्य कभी समाज, परिवार, राष्ट्र आदि में व्याप्त विद्रूपताओं को उजागर करना होता है तो कभी इनसे विचारों, अंतर्मन की स्थितियों या फिर हृदय-व्यापारों आदि को अभिव्यक्ति प्रदान करना होता है। इसके अतिरिक्त कभी-कभी कहानी का उद्देश्य सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक धार्मिक एवं सांस्कृतिक आदि जीवन-क्षेत्र में अंतर्भुक्त विशिष्टताओं, प्रवृत्तियों तथा लोककल्याणकारी तत्त्वों को प्रकट करता है। जैसा कि विगत अध्याय के अंतर्गत अब्दुल बिस्मिल्लाह के उपन्यासों में अंतर्भुक्त विविध प्रकार की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक चेतनाओं के अध्ययन-अनुशीलन के अनुक्रम में

पूर्वपीठिक स्वरूप उल्लिखित हो चुका है कि प्रत्येक दशा में साहित्य अपने देशकाल और वातावरण की परिस्थितियों, प्रवृत्तियों तथा चित्तवृत्तियों आदि की ही उपज होता है। कोई भी साहित्यकार अपनी सर्जनाओं में अपने देशकाल वातावरण की अवहेलना करके सार्वकालिक प्रासंगिता वाली सर्जनाएँ करने में सफल नहीं हो सकता है। इसे सरल शब्दों में कहें तो रचनाकार अपने समाज को जिस रूप में देखता या अनुभव कर रहा है, उसे उसी रूप में दर्पण की भाँति शब्दों के माध्यम से अपनी रचनाओं में प्रतिबिम्बित कर देता है तभी तो साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है।

बिस्मिल्लाह जी भी साहित्य और समाज की इसी आपसी सम्बद्धता को पुष्टि प्रदान करने वाले सर्जक हैं। उन्होंने जिस तरह से अपने उपन्यासों में बीसवीं शताब्दी के आठवें दशक से लेकर वर्तमान समय तक की भारत की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और धार्मिक संगतियों-विसंगतियों, परिस्थितियों तथा परिवर्तनों व व्यापारों आदि को अभिव्यक्ति प्रदान की है उसी तरह से एक कहानीकार के रूप में उनकी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक चेतना भी अपने समय और समाज में व्याप्त रही संगतियों-विसंगतियों अथवा परिस्थितियों-परिवर्तनों के ययार्थ चित्रण से संबंधित रही है। इसे इस तरह से भी कह सकते हैं कि निवर्तमान सदी के आठवें दशक से लेकर वर्तमान इक्कीसवीं सदी के दूसरे दशक तक उत्तर भारत की जो सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियाँ रही हैं या फिर इस कालावधि में जीवन के इन क्षेत्रों में जो परिवर्तन घटित हुए अथवा लोगों की जो मनोवृत्तियाँ रहीं, उन्ही का यथार्थ परक चित्रण बिस्मिल्लाह जी ने अपने कहानियों में किया है।

विवेच्य को इसलिए शामिल किया गया है, क्योंकि यह बिस्मिल्लाह जी के साहित्य-लेखन की अवधि रहीं है। इस कालखण्ड में देश की जो सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, और सांस्कृतिक परिस्थितियाँ, प्रवृत्तियाँ, मनोवृत्तियाॅं, विसंगतियाँ रही है उनका

विशद वर्णन-विवेचन विगत अध्याय में विभिन्न प्रकरणों के अंतर्गत किया जा चुका है इसलिए यहाँ उनका उल्लेख करना विषय का दुहराव मात्र होगा। इस दुहराव की उपेक्षा के दृष्टिगत यहां सीधे बिस्मिल्लाह जी की कहानियों में अंतर्भुक्त विविध विषयी संख्यातीत चेतनाओं का अध्ययन-अनुशीलन करना अधिक समीचीन प्रतीत होता है। अध्ययन-विवेचन की सुविधा के लिए बिस्मिल्लाह जी की सभी कहानीपरक चेतनाओं को विषयों के सापेक्ष अलग-अलग प्रकरणों में विभाजित किया गया। है जिसमें प्रथम स्थान आर्थिक चेतनाओं का है।

4.1 आर्थिक चेतनावादी स्वर-

वैसे तो मनुष्य जीवन के संदर्भ में अनादिकाल से ही अर्थ का विशिष्ट महत्त्व रहा है लेकिन भूमण्डलीकरण, बाजारवाद औद्योगीकरण, पूँजीवाद तथा द्वन्द्वात्मक भौतिकतावाद के वर्तमान युग में अर्थ का महत्व इस सीमा तक बढ़ गया है कि आज यह मनुष्य जीवन के सभी पक्षों की स्थिति का नियंत्रक और निर्धारक बन गया है। व्यक्ति का समाज या परिवार में क्या महत्व होगा, उसे कितना सम्मान प्राप्त होगा, वह समाज में स्वयं को अस्तित्त्व को कब तक बनाए रख पाएगा, सामाजिक-धार्मिक परम्पराओं, मूल्यों, आदर्शों, नैतिकताओं, रीति-रिवाजो आदि का अनुपालन किस सीमा तक कर पाएगा, सांस्कृतिक परम्पराओं का निर्वहन कितना कर पाएगा, राजनीति को कितना प्रभावित कर पाएगा या फिर राजनीति से कितना प्रभावित होगा आदि सभी बातें अर्थ पर ही आश्रित हो गयी हैं। इसमे मनुष्य के रहन-सहन, खानपान, शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, पानी, बिजली, मकान आदि मूलभूत आवश्यकताओं को भी जोड़ दिया जाए तो आज के संदर्भ में अर्थ को जीवित रहने का पर्याय कहा जा सकता है। यह अर्थ, रुपयो, संसाधनो, कृषि क्षेत्रों, उद्योगन्धो तथा व्यापार आदि किसी भी रूपों में हो सकता है। अर्थ अपनी किसी प्रकृति में मनुष्य के पास वर्तमान है, यह महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि अर्थ की वर्तमानता ही व्यक्ति के लिए प्राथमिक बन गयी है।

अर्थ की भाषा अर्थोपार्जन की नैतिकताओं पर बुनियादी महत्ता ने आज सर्वाधिक प्रहार किया है जिसमें मनुष्य अर्थ संग्रह के लिए साम, दाम, दण्ड, भेद के सभी तरीके अपनाने लगा है। ऐसे में धन चोरी करके आ रहा है या फिर किसी गरीब, शोषित, पीड़ित का हक छीनकर आ रहा है, यह महत्वपूर्ण नहीं रह गया है। महत्वपूर्ण यह है कि धन आ रहा है चाहे किसी भी तरीके से। लेकिन अनैतिक तरीके से अर्थोपार्जन करने का कार्य पहले से ही संसाधन संपन्न हुए लोग करते हैं जिनमें धन संचय की भावना एक तरह की आर्थिक भूख में बदल गयी ऐसे लोगों में राजनेता, पूँजीपति, सामंत एवं उद्योगपति आदि आते हैं जो अपनी अर्थगत क्षुधा-दृष्टि के लिए गरीबों तथा साधारण लोगो का शारीरिक, मानसिक शोषण करते रहते हैं। ऐसे लोग राजनीति तथा प्रशासन से घनिष्ठता के साथ संबंधित होते हैं जिसके कारण इन्हें दूसरों का हक छीनने में तनिक कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता है। दरअसल धनोपार्जन के लिए भी धन की आवश्यकता होती । इसे इस तरह से भी कह सकते हैं कि धन से ही धन कमाया जाता है। ऐसे में जो पहले से ही आर्थिक रूप से संपन्न होता है वही और अधिक धनवान बनता है, जबकि इसके विपरीत गरीब की गरीबी निरंतर क्योंकि उसके पास धनोपार्जन के लिए आवश्यक शक्ति, सामर्थ्य एवं लागत नहीं होती है।

अर्थशास्त्र के सिद्धांतों के अनुसार जब लागत शून्य है तो स्वाभाविक रूप से मुनाफा भी सून्य ही होगा। संसाधन संपन्न लोग जहाँ बड़े-बड़े उद्योग धंधों की स्थापना, व्यापार आदि के माध्यम से अपने अर्थ संग्रह में वृद्धि करते हैं वहीं साधारण लोग नौकरी, खेती एवं मजदूरी अथवा लघु या मझोले किस्म के उद्योगो-व्यापारों आदि के द्वारा अपनी अर्थगत आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं, जो कि एक हद तक इसकी आर्थिक स्थिति में सुधार लाकर इन्हें समाज में पद-प्रतिष्ठा और मान-सम्मान दिलाने में सहायक होता है। भारत एक गाँव बहुल देश है तथा गाँवों में कुछ ऐसे लोग भी होते हैं जो न तो पूँजीपति, राजनेता, व्यापारी और सामंत ही होते हैं कृषक, मजदूर या नौकर ही इस वर्ग के लोगों के पास इसलिए समाज में एवं परिवार में सर्वाषिक दुर्धातिंक संसाधन-संपन्न लोग जहाँ इन्हीं की

ऐशो आराम के साथ अपना जीवन व्यतीत करते हैं वहीं इन लोगों के लिए अपने और अपने परिवार का दोनों वक्त पेट पालना भी मुश्किल होता है। कुल मिलाकर कहे तो अर्थाभाव् ही स्थिति में अपमानजनक एवं जहालत भरी जिदगी व्यतीत करनी पड़ती है और यह स्थिति मध्यम एवं निम्न दोनों वर्ग वालों की होती है। कारण यह है कि निम्न आय-वर्ग के पास तो वैसे भी आय का कोई निश्चित श्रोत नही होता है, जबकि मध्यम आय वर्ग प्रधानतः कृषि तथा मजदूरी या नौकरी पर आश्रित होता है। इनमें मजदूरी भी निश्चित नहीं होती है तथा कृषि आज भी हमारे यहाँ परम्परागत तरीके से ही की जाती है, जिसका तकनीकी प्रयोग से कोई संबंध नहीं होता है यही कारण है कि किसानों की आर्थिक स्थिति सुधरने के बजाय दिन-प्रतिदिन दयनीय होती जा रही है। जिसमें ऋणग्रस्तता सबसे बड़ी समस्या है, जो कि किसानों को आत्महत्या के के पायदान तक ले जाती है।

सर्वज्ञात है कि भारत विकासशील देशों की श्रेणी में आता है जहाँ कृषि जनसंख्या के अधिकांश भाग का प्रमुख व्यवसाय है। यद्यपि वर्तमान में भारत का औद्योगिक विकास अपने उत्कर्ष की ओर अग्रसर है लेकिन कुछ दशकों पूर्व ऐसी स्थिति नहीं थी जिसके कारण हमारी गणना पिछड़े देशों में की जाती थी। औपनिवेशिक शासन के समय भारत के स्थलीय उद्योग धंधों को कुचलकर इसे ब्रिटेन के उद्योगों में प्रयुक्त होने वाले कच्चेमाल का उत्पादक मात्र बनाकर रख दिया गया। जो बड़े उद्योग स्थापित भी हुए वे पूँजीपतियों तथा ब्रिटिश सरकार की आर्थिक महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के उद्देश्य से स्थापित थे और इनमें भी ज्यादातर लघु एवं मझोले किस्म के उद्योग ही थे। अंग्रेजों के स्वयं तो भारी उद्योगों की स्थापना नहीं मिली लेकिन औपनिवेशिक भारत की अर्थव्यवस्था के आधार कुटीर एवं हथकरघा उद्योगों को उन्होंने अवश्य नष्ट कर दिया। परिणामस्वरूप भारत की आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय हो गयी। यहाँ के प्राकृतिक संसाधनों के निर्मम दोहन तथा उन्हें योरप भेजने की अंग्रेजों की नीति के चलते परतंत्र भारत की आर्थिक स्थिति निरंतर बद से बदतर होती चली गयी तथा देश निर्धनता को बेरोजगारी और भुखमरी के गर्त में पहुंच गया। इसी

स्थिति में ग्रामीणों का नगरों की ओर पलायन भी शुरू हुआ जिसे नगरीकरण की प्रक्रिया के रूप में देख सकते हैं। हालाँकि नगरों में आवास एवं उचित खान-पान की व्यवस्था न होने के कारण झुग्गी-झोपड़ी में रहने वाले लोगों की जीवन-स्तर में और भी गिरावट आयी तथा उनके सामने अनेक नयी समस्याएँ उत्पन्न हो गयीं। इसी समय व्याप्त जमीदारी प्रथा एवं साहूकारी प्रथा ने गाँवों तथा नगरों दोनों में अपना पैर पसारा, जिसके परिणामस्वरूप कृषक, मजदूर, नौकरी पेशा तथा छोटे उद्यमी आदि सभी महाजनों के कर्ज़ के बोझ तले दबते चले गए और उन्हें मृत्यु ही इस भार से मुक्ति दिला सकी।

स्मरणीय है कि औपनिवेशिक भारत बाढ़, अकाल, सूखा, महामारी आदि प्राकृतिक आपदाओं से भी पीड़ित रहा, जिसने सामान्य भारतवासियों के जीवन को अत्यधिक दुर्गत बना दिया। एक तो अग्रेजों की स्वार्थपरायणी विकृत आधिक नीतियाँ और दूसरे प्राकृतिक आपदाएँ इन सभी ने मिलकर भारत को गरीबी, भुखमरी, वस्त्र एवं आवास विहीनता, बीमारी, लाचारी आदि के उत्कर्ष पर लाकर खड़ा कर दिया। जो सामंत और साहहूकार थे या फिर पहले मुगलो तथा फिर अंग्रेजों की चाटुकारिता करने के कारण जिनका आर्थिक संसाधनों पर अधिकार हो चुका था।

औपनिवेशिक भारत आर्थिक दृष्टि से उच्च वर्ग एवं निम्न वर्ग में विभक्त हो गया। योरोपीय व्यापारियों तथा अंग्रेजी प्रशासकों द्वारा भारत की दुर्दांत आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए आजादी के बाद से लेकर आज तक चुनी गयी सभी लोकतांत्रिक सरकारों ने अपने-अपने स्तर से प्रयास किया। पंचवर्षीय योजनाओं का आरम्भ, उद्योग-धंधों की स्थापना, कृषि व्यवस्था में सुधार, विभिन्न कृषिगत एवं गैर-कृषिगत कोटियों का प्रादुर्भाव, अनाज के संदर्भ में आत्मनिर्भरता, उत्पादन में वृद्धि, यातायात एवं विपणन प्रणाली में सुधार, उदारवादी नीति के सहारे भारतीय बाजारों का वैश्वीकरण आदि सरकारी प्रयासों के ही परिणाम थे। यद्यपि अपने-अपने सिद्धांतों के अनुरूप सभी राजनीतिक दलों की सरकारों ने

भारत की अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाने का प्रयास किया जिसमें बड़े पैमाने पर अनेक तरह की भाषिक योजनाएँ चलायी गयी लेकिन राजनीतिक-प्रशासनिक भ्रष्टाचार, लालफीताशाही व्यवस्था तथा वोट बैंक की राजनीति आदि घटकों ने इस योजनाओं को या तो कागजों तक ही सीमित करके रख दिया या फिर इन्हें नेताओं मंत्रियों का खजाना भरने का आधार बना दिया।

योजनाएँ बनती रहीं और योजनाओं के लिए आवंटित धनराशि, सांसदों, विधायकों, नेताओं, मंत्रियों, जमीदारों, ठेकेदारों तथा प्रभुत्त्वशाली लोगों में बंटती रही। इन सबका दुष्परिणाम यह रहा कि आजादी प्राप्त किये हुए आधी सदी से अधिक का समय व्यतीत हो जाने के बाद भी भारत की आर्थिक स्थिति में अपेक्षित सुधार नहीं था, गरीबी, भुखमरी, अशिक्षा, बेरोजगारी, वस्त्र एवं आवासविहीनता आदि आर्थिक स्थितियाँ पहले की तरह ही समाज में अपना पैर दृढ़ता के साथ जमाए रहीं। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं, भूमि सुधार आंदोलनों, विभिन्न प्रकार की आर्थिक क्रांतियों, उदारवादी नीतियों तथा विकास योजनाओं आदि से जो थोड़ा बहुत आर्थिक सुधार हुआ भी वह समाज में समान रूप से नहीं हुआ। ग्रामप्रधान, क्षेत्र पंचायत सदस्य, जिला पंचायत सदस्य, ब्लॉक प्रमुख, तहसीलदार, स्थानीय नेता, विधायक, लेखपाल, जिलाधिकारी आदि। राजनीतिक-प्रशासनिक लोगों से जिसका परिचय रहा, उसे इन सरकारी योजनाओं का लाभ मिला या फिर यों कह लें कि इन लोगों ने सरकारी योजनाओं को धरातल पर लाने में आवश्यकता के स्थान पर पहचान को महत्त्व दिया और लोगों से पैसे लेकर मनमानी तरीके से योजनाओ का क्रियान्वयन किया। परिणाम यह रहा कि राशन से लेकर केरोसीन तेल वितरण तक ग्रामप्रधान, कोटेदार आदि भ्रष्टाचार में आकंठ डूबे रहे।

सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन के सर्वाधिक भ्रष्टाचार स्थानीय शासन के स्तर पर ही रहा है जिसमें ग्रामप्रधानो की महती भूमिका रही है। क्योंकि भ्रष्टाचार की राशि शासन-

प्रशासन में सभी स्तरों पर समान-असमान रूप से विभाजित होती रही है, इसलिए स्थानीय शासन में व्याप्त भ्रष्टाचार को नियंत्रित करना आसान नहीं रहा है। इसी का फायदा उठाकर गाँव का प्रधान मरे हुए ब्यक्ति का जॉबकार्ड बनाकर उनके नाम का पैसा लेता रहा और जिसे वास्तव में उन योजनाओं की आवश्यकता थी अर्थात् जो वास्तविक लाभार्थी थे उनसे मुहर लगाने या सरकारी योजनाओ का लाभ दिलाने के लिए पैसे भी ऐंठता रहा। इसी तरह सरकार द्वारा भेजे गए राशन की गाड़ी सरकारी गल्ला विक्रेता के घर ना पहुंच कर विक्रय हेतु मंडी में भेजी जाती रही तथा सड़क, तालाब, नहर आदि सार्वजनिक कार्यों के लिए दिल्ली से भेजी गई धनराशि स्थानीय शासन के प्रमुखों की तिजोरी में जमा होती रही। स्वतंत्र भारतीय समाज के सम्मुख प्रादूर्भूत इस नवीन आर्थिक विसंगति ने औपनिवेशिक शासन में भी अधिक भारतीय समाज का अहित किया। अंग्रेजी शासन के समय जहाँ अर्थ के आधार पर भारतीय समाज उच्च एवं निम्न वर्ग में ही विभाजित था वही लोकतांत्रिक भारत में व्याप्त प्रशासनिक-राजनीतिक भ्रष्टाचार, लालफीताशाही व्यवस्था, स्थानीय शासन की असफलता तथा वोट बैंक की राजनीति आदि ने समाज को अर्थ के आधार अनेक वर्गो-उपवर्गो में विभक्त कर दिया। पहले समाज सामान्य रूप से उच्चवर्ग, मध्यमवर्ग तथा निम्न वर्ग में विभाजित हुए इसके बाद इन वर्गों के भी तीन अप वर्ग हुए अर्थात उच्च वर्ग तीन अप वर्गों में विभाजित हुआ। इस तरह से कहा जा सकता है कि अर्थ के आधार पर परतंत्र भारतीय समाज की समतुल्यता में स्वाधीन भारत का समाज अनेक स्तरों या वर्गो-उपवर्गो में विभाजित रहा है जो कि यह संकेत करता है कि आजाद भारत की सरकारों द्वारा लोकतांत्रिक, आर्थिक सुधार के लिए किए गये प्रयास अथवा सरकार द्वारा आर्थिक सुधार की दृष्टि से चलायी गयी सरकारी योजनाएँ समाज के प्रत्येक व्यक्ति या वर्ग को समान रूप से लाभान्वित करने में असफल रही है। जिस व्यक्ति या वर्ग तक जितनी मात्रा में ये योजनाएँ पहुंची, उसकी उतनी ही मात्रा में आर्थिक स्थिति सुधरी।

क्योंकि स्थानीय शासन एवं राजनीतिक-प्रशासनिक व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार ने सरकारी योजनाओं को समाज के प्रत्येक व्यक्ति-वर्ग तक समान प्रकृति में नहीं पहुँचने दिया इसलिए स्वाभाविक है कि ये समाज में वर्ग-विभेद दृष्टिगोचर हो। मध्यम वर्ग का प्रादुर्भाव इसी आर्थिक विसंगति का परिणामजन्य कारण रहा है जो संख्या एवं राजनीतिक महत्त्व की दृष्टि से समाज का सर्वप्रमुख वर्ग कहा जा सकता है।

जहाँ आर्थिक स्थिति के आधार पर वर्ग विभाजन होगा वहाँ शोषक एवं शोषित वर्ग स्वाभाविक रूप से विद्यमान रहेंगे। स्वतंत्र भारत में यद्यपि सामंतवादी व्यवस्था समाप्त हो चुकी है लेकिन पूँजीपति, सामंत, साहुकार और जमींदार पहले की तरह आज भी शोषक के रूप में समाज के मध्य और निम्न वर्ग का शोषण कर रहे हैं। इनके अतिरिक्त प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से राजनेता और प्रशासक भी विभिन्न आर्थिक-शारीरिक शोषण करने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ रहे हैं। क्योंकि समाज के प्रत्येक वर्ग की अपनी-अपनी सामाजिक स्थिति, आवश्यकताएँ, अधिकार, संसाधनों की उपलब्धता व्यवहार बतौर तरीके आदि होते हैं इसलिए स्वाभाविक है कि प्रत्येक वर्ग एक-दूसरे से वैचारिक-व्यावहारिक मतभेद भी रखते हो, जो कि कार्ल मार्क्स के वर्ग-संघर्ष सिद्धांत के अंतर्गत आता है। मार्क्स ने कहा है कि क्योंकि समाज, में प्रत्येक वर्ग की आर्थिक स्थिति अलग-अलग होती है इस लिए राजा-प्रजा, सरकार-जनता, शोषक-शोषित, गरीब-अमीर, मालिक-मजदूर, सेठ-साहूकार, किसान-जमींदार, क्रेता-विक्रेता आदि वर्गों के बीच सदैव आपसी द्वंद्व की स्थिति बनी रहती है। कार्ल मार्क्स का मानना था कि प्रत्येक समाज में शोषक और शोषित या सर्वहारा यही दो वर्ग सदैव विद्यमान होते हैं। हालाँकि आज के भारतीय समाज में एक तीसरा वर्ग भी है, जिसे मध्यम वर्ग के नाम से जाना जाता है। भारतीय समाज के संदर्भ में उच्च वर्ग या अभिजात वर्ग को शोषक तथा निम्नवर्ग या सर्वहारा वर्ग को शोषित वर्ग कहा जा सकता है, जबकि मध्यमवर्ग की स्थिति इन दोनों वर्गों के बीच की है। है।

समाज का सर्वाधिक संघर्षशील वर्ग मध्यमवर्ग ही है क्योंकि इसवर्ग की महत्वाकांक्षा उच्च या अभिजात वर्ग की बराबरी करने तथा निम्न वर्ग से ऊपर बने रहने की है। पद प्रतिष्ठा, मान, सम्मान आदि के लिए भी मध्यमवर्ग संघर्षशील है जबकि निम्नवर्ग अपने जीवन-आस्तित्व के लिए उच्च वर्ग एवं मध्यम वर्ग दोनो संघर्षरत है। यद्यपि समाज की यह वर्गीय स्थिति आपके समय में संसार के प्रत्येक समाज में देखी जा सकती है लेकिन भारतीय समाज के संबंध वर्ग विभेद अत्यधिक जटिलता लिए हुए है जिसके आधारिक कारणों का वर्णन-विवेचन ऊपर के प्रकरणों में किया जा चुका है। आधुनिक भारत का नगरीय समाज हो या फिर ग्रामीण समाज सभी में कमोवेश रूप से यह वर्ग विभाजन विद्यमान रहा है। जबसे भूमण्डलीकरण, बाजारवाद, वैज्ञानिकता, उत्तर आधुनिकतावाद, औद्योगीकरण, नगरीकरण सूचना एवं संचार क्रांति आदि वैश्विक अवधारणाएँ भारतीय समाज तक पहुँचने लगी हैं तब से यह वर्ग-विभाजन और भी जटिल हो गया है। उच्च मध्यम एवं निम्न वर्ग का इन्हीं तीन उपवर्गों में विभाजन करने में इन वैश्विक विचारधाराओं की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है क्योंकि जो व्यक्ति आर्थिक दृष्टि से जितनी मात्रा में संसाधन संपन्न या विपन्न होगा, उसे उसी ही मात्रा में ये विचारधाराएँ प्रभावित करने की सामर्थ्य रखती हैं। इसके अतिरिक्त पश्चिम से आयातित इन् वैश्विक अवधारणाओं ने समाज को शोषक एवं शोषित वर्ग के बीच के संबंधों को और भी अधिक क्रूर बना दिया है।

बाजारवाद के इस दौर में पूँजीपति, सेठ, साहूकार आदि अभिजात वर्ग के लोग कम लागत में अधिक उत्पादन के अभिलाषी बन गये हैं जिसके परिणामस्वरूप मानक संसाधन के रूप में निम्न वर्ग का अत्यधिक क्रूरता के साथ शोषण करने लगे हैं। ध्यातव्य है कि पहले से ही संसाधन संपन्न होने के कारण उच्च का देश के अधिकांश प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों पर आधिपत्य है जिनका ये निजहित में मनमानी तरीके से उपयोग करते है फलस्वरूप एक विकृत किस्म का मानवीय शोषण जन्म लेता है जिसका शिकार निम्नवर्ग

होता है, क्योंकि यही वर्ग आजीविका आदि के लिए मजदूरी करने अभिजात वर्ग के पास जाता है।

समकालीन उपन्यासकार अब्दुल बिस्मिल्लाह का व्यावहारिक जीवन जहाँ निम्नवर्ग एवं मध्यम वर्ग से अंतर्संबंधित रहा है वहीं साहित्य सृजन के संदर्भ में वे काल मार्क्स के आर्थिक सिद्धांतों से प्रेरित-प्रभावित थे। इसे सामान्य शब्दों में कहना चाहे तो कह सकते हैं कि बिस्मिल्लाह जी का साहिसिक दर्शन मार्क्सवाद था जिसे आधार बनाकर ही उन्होंने साहित्य की रचना की है। इसी अनुक्रम में उनकी कहानियाँ भी मार्क्सवादी दर्शन से प्रभावित दिखाई देती हैं जिनमें प्रमुखतः शोषक एवं शोषित वर्गों की स्थिति का यथार्थपरक चिन्तन किया गया है। लेकिन इन दोनों वर्गों के अलावा इसकी कहानियों में मध्यमवर्ग की आर्थिक स्थिति को भी व्यापक अभिव्यक्ति प्रदान की गयी है इसका अस्वीकरण नहीं किया जा सकता है। ऐसे में कह सकते हैं कि बिस्मिल्लाह जी ने मार्क्सवादी दर्शन को भले ही अपनी कहानियों में लेखन की सैद्धांतिकी के रूप में प्रयुक्त किया हो लेकिन उनकी कहानियों में उनका भोगा हुआ यथार्थ भी एक एक स्वतंत्र दर्शन के रूप में वर्तमान रहा है। मार्क्सवादी विचारों की प्रभावोत्पादकता के रूप में जहाँ वे शोषक एवं शोषित वर्ग का चित्रण करने में सफल रहे हैं वही उनकी व्यावहारिक परिस्थितियाँ और जीवनगत अनुभूतियों की प्रभावोत्पादकता उन्हें समाज के मध्यमवर्ग की आकांक्षाओं-अभिलाषाओं, जीवन संघर्षों आदि की अभिव्यक्ति को प्रोत्साहित करती है। इन सबके अलावा उन्होंने अपनी कहानियों में स्थानीय शासन राजनीति और प्रशासन आदि के द्वारा साधारण वर्ग का किया जाने वाला शोषण सरकारी योजनाओं की विफलता या उनकी लूट-खसोट एवं विकास योजनाओं में नेताओ, मंत्रियों व अधिकारियों द्वारा की जाने वाली सेंधमारी आदि का भी चित्रण किया गया है। दरअसल बिस्मिल्लाह जी प्रगतिशील विचारों के संपोषक साहित्य-सर्जक हैं इसलिए उनकी आर्थिक चेतना का आयाम भी अत्यधिक व्यापक रहा है। ऐसे में उनकी कहानियों में अंतर्निहित आर्थिक चेतनावादी स्वर को स्पष्ट रूप से सुनने के लिए मार्क्सवाद के शोषक-

शोषित संबंधों से कुछ आगे बढ़कर उनके व्यक्तिगत व्यावहारिक जीवन की स्थिति तक पहुंचना होगा जिसमें वे पूर्वार्द्ध में निम्नवर्ग तथा उत्तरार्द्ध में मध्यमवर्ग से ताल्लुकात रखते हैं। ऐसे में उसकी आर्थिक चेतना को शोषक-शोषित के बीच स्थिति संबंधों के अतिरिक्त विकास योजनाओं की असफला, आर्थिक भ्रष्टाचार, गरीबी, भुखमरी, आवास विहीनता, बेरोजगारी, अशिक्षा आदि घटकों से संबंध करके भी देखना पड़ेगा। ध्यातव्य है कि टूटा हुआ पंख, कितने-कितने सवाल, रैन बसेरा, अतिथि देवो भव, जीनिया के फूल, रफ रफ मेल तथा शादी का जोकर बिस्मिल्लाह जी की प्रकाशित प्रमुख कहानी संग्रह हैं। इन कहानियों का अध्ययन-अनुशीलन करने के उपरांत बिस्मिल्लाह जी की आर्थिक चेतना का जो स्वरूप प्राप्त होता है, उसे हम अलग-अलग प्रकरणों में विभाजित करके ही उसका समग्र अध्ययन-विवेचन कर सकते हैं। ऐसे में बिस्लिल्लाह जी की कहानियों में जो आर्थिक चेतना का स्वर सुनाई पड़ता है, उसका वर्णन-विवेचन कुछ इस प्रकार किया जा सकता है-

गरीबी एवं अभावग्रस्तता की समस्या- एक सार्वकालिक सत्य के रूप में गरीबी और अभावग्रस्तता सार्वभौमिक स्वरूप में प्रत्येक समाज के निम्न वर्ग से संबंधित रही है। मध्यकाल से पूर्व भारत आर्थिक रूप से अत्यंत समृद्ध था जिसके कारण इसे सोने की चिड़ियॉ कहा जाता था। यद्यपि उस समय भी समाज के निम्नवर्ग में निर्धनता की समास्या व्याप्त थी लेकिन फिर भी स्थिति नियंत्रण में थी। मध्यकाल में मुस्लिम आक्रांताओं के समय सामंतवादी व्यवस्था ने गरीबी की और बढ़ावा दिया तथा इसके स्वरूप को भी विकृत बना दिया। कंपनी शासन तथा औपनिवेशिक शासन की क्रूर आर्थिक नीतियों ने भारत को विपन्न बनाकर गरीबी एवं भुखमरी के गर्त में ढकेल दिया।

इसी तरह स्वाधीन भारत में भी भ्रष्टाचार, घूसखोरी राजनीतिक-प्रशासनिक विसंगति तथा लालफीताशाही व्यवस्या आदि। घटको ने मिलकर निम्नवर्ग को निर्धनता से बाहर नहीं आने दिया। कहने का अभिप्राय यह है कि निर्धनता अनादिकाल से ही भारतीय समाज में

एक प्रवृत्ति या घटक के रूप में विद्यमान रही है और आज भी है। यह अपनी विभिन्न प्रकृतियों में भिन्न-भिन्न तरीको से समाज के निम्न-वर्ग व जीवन को प्रभावित-नियंत्रित करती रही है। व्यक्ति के पास जब उसकी आवश्यकता के अनुरूप पैसा न हो या फिर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु जब उसके पास यथेष्ट संसाधन उपलब्ध न हो तभी उसे गरीब या निर्धन कहा जाता है और यह निर्धनता अपने प्रत्येक रूपों मे व्यक्ति का अहित ही करती है। निर्धनता ही मनुष्य को समाज में निम्नवर्ग में ले जाती है तथा यही समाज में उसके मान-सम्मान पद-प्रतिष्ठा एवं महत्त्व आदि का निर्धारण करती है। केवल इतना ही नहीं बल्कि निर्धनता जहाँ व्यक्ति को सुख एवं शांति का जीवन व्यतीत करने से वंचित रखती है वहीं उसके निर्मम शोषण का भी मार्ग प्रशस्त करती है। निर्धन व्यक्ति के पास न तो संसाधन होता है और न ही सामर्थ्य न ही अधिकार होता है तथा न ही किसी तरह प्रभुत्त्व- ऐसे में उसका अभिजात वर्ग के द्वारा मनमानी शारीरिक और आर्थिक शोषण किया जा सकता है।

आर्थिक दृष्टि से कमजोर अर्थात् निर्धन वर्ग के पास अपने अधिकारो की प्राप्ति या फिर शोषण के खिलाफ न्याय के मंदिर में भी जाने की सामर्थ्य नहीं होती है जिसका फायदा उठाकर शोषक उसका निरंतर शोषण करते रहते हैं। कथाकार अब्दल बिस्मिल्लाह ने अपनी कहानियों में अर्थाभाव में संघर्षरत आम-आदमी की जीवन-स्थितियों को मार्मिक एवं संवेदनात्मक अभिव्यक्ति प्रदान की है। उनकी अनेक कहानियों में गरीबी और निर्धनता की स्थिति में प्रादभूत होने वाले शोजण, दमन, उत्पीड़न, बेकारी आदि का यथार्थप चित्रण देखने को मिलता है। 'कागज के कारतूस' शीर्षक कहानी में कथानायक वसीमउल्ला साहब का पूरा परिवार निर्धनता से संघर्ष करता दिखाई देता है। घर में आमदनी का कोई श्रोत नहीं है और न ही कोई कमाने वाला है। वसीमउल्ला साहब स्वयं राजनेता के पिछलग्गू है ऐसे में घर चलाने का उत्तरदायित्व उसकी कुँवारी बेटियों पर आ जाती है। उनका एक बेटा भी है लेकिन वह केवल आवारागर्दी करता है, परिवार की दयनीय स्थिति-उसके लिए कोई महत्व नहीं रखती है। अर्थाभाव् की स्थिति में समाज का मध्यम वर्ग किस तरह से द्वंद्व एवं संघर्ष

की स्थिति में जीवन व्यतीत करता है- इसका सर्वोत्तम उदाहरण हम 'ज्ञानमार्गी' कहानी में देख सकते हैं।

कहानी का नायक देशमुखर्जी वैसे तो पेशे से एक अध्यापक है लेकिन समय पर वेतन नहीं मिलने के कारण उसके लिए पारिवारिक उत्तर दायित्वों का बोझ भी असहनीय हो गया है। पिताजी हमेशा बीमार रहते हैं ऐसे में उनके इलाज के लिए हमेशा पैसों की जरूरत रहती है, जबकि उनका वेतन समय पर नहीं मिलता है। मध्यम वर्ग समाज में अपने मान-सम्मान और पद-प्रतिष्ठा को बचाए रखने के लिए विषम से विषम परिस्थिति में भी किसी के आगे मदद का हाथ नहीं फैलाता है। ऐसे में पेशे से अध्यापक देशमुखर्जी के लिए भी किसी से कर्ज लेना या मदद मांगना अपने वर्गीय आदर्शों या सिद्धांतो के अनुरूप नहीं होगा। अधिकारियों तथा संस्थागत राजनीति के कारण देशमुखर्जी को समय पर तनख्वाह नहीं मिलती है इसलिए वे अपने परिवार की आवश्यकताओं एवं सुख-सुविधाओं का भी ध्यान नहीं रख पाते हैं। अध्यापक होकर भी उन्हें किराये के गंदे मकान में रहना पड़ता है। इस कहानी के माध्यम से बिस्मिल्लाह जी ने व्यक्तिगत स्कूल-कॉलेजो में अध्यापन करने वाले अध्यापकों की आर्थिक स्थिति का चित्रण किया है। समय पर वेतन न मिलने के कारण उत्पन्न आर्थिक विद्रूपताओं-विषमताओं का वर्णन करते हुए देशमुखर्जी एक स्थान पर कहता है कि- "आज अठारह तारीख हो गयी अभीतक बिल ही पास नहीं हुए। पत्नी और पिताजी दोनों उन पर खीझेंगे अभी। वक्त से न दवा आ पाती है न राशन। कितने वर्ष हो गए यहाँ आए इसी गंदे मकान में रह रहे हैं। सरकारी नौकरी में बंगले मिला करते हैं।" इस कहानी में एक अध्यापक के रूप में बिलिल्लाह जी का अपना भोगा हुआ यथार्थ भी सन्निहित है, जो कि गैर-अनदानित संस्थाओं में अध्यापन करने वाले अध्यापको की आर्थिक स्थिति का भी प्रतिनिधित्व कहा जा सकता है। इसी तरह 'प्रथम प्रसव' शीर्षक कहानी में निर्धनता की स्थिति में महानगरीय जीवन किस तरह से अभिशापित हो जाता है- इसका यथार्थपरक चित्रण किया गया है। अर्थाभाव् की स्थिति में व्यक्ति को किस हद तक गिरना

पड़ता है, लोगों के आगे हाथ फैलाना पड़ता है तथा अनचाहा निर्णय लेना पड़ता है इन सभी परिस्थियों का संवेदनात्मक चित्रण किया गया है। शहरों में रहने वाले ऐसे लोग जिनकी आमदनी बढ़त कम होती है उनका जीवन किस सीमा तक संकीर्ण एवं दयनीय होता है- उसी का चित्रण इस कहानी में किया गया है।

शहर में रहने वाले ऐसे लोगों के यहाँ जब कोई संगा-संबंधी आ जाता है तब इसकी स्थिति और भी करुणामयी हो जाती है। इसी तरह इन्द्रधनुष, पुण्यभोज, खुशी, जन्मदिन, दूसरे मोर्चे पर, कानून, कच्ची सड़क, मरुस्थल, तूफान से पहले, मुरीद, सालभर का त्यौहार, कर्मयोग, दुलहिन, त्राहिमान तथा उनकी बीमारी आदि विभिन्न कहानी संग्रहों में संग्रहित कहानियों में भी बिस्मिल्लाह जी ने निर्धनता के विभिन्न स्वरूपों और प्रभावों का मर्मांतक चित्रण किया है।

निर्धनता ही अभावग्रस्तता की जननी होती है। जब व्यक्ति निधेन होगा अर्थात् उसके पास आवश्यकता अनुरूप धन एवं संसाधन नहीं होगा तब वह अपनी आवश्यकताएँ कैसे पूरी कर पाएगा। ऐसे में उसे अभावग्रस्त जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य होना पड़ेगा। अब्दुल बिस्मिल्लाह ने जैसे अपनी कहानियों में अर्थाभाव् की स्थिति का चित्रण किया है वैसे ही इससे प्रादुर्भूत अभावग्रस्तता की स्थिति पर भी यथावश्यक दृष्टिपात किया है। इनकी कहानियों में अभावग्रस्तता निम्नवर्गीय जीवन में आवास, वस्त्र, पानी, अस्पताल, यातायात, शिक्षा भोजन दवा व खाद्यान्न आदि की वंचना के रूप में चित्रित हुई है। 'अतिथि देवो भव' शीर्षक कहानी संग हमे संग्रहित कहानी 'खाल खींचने वाले' में निम्नवर्गीय चमार जाति से संबंध रखने वाले भूने सर के अभावग्रस्त जीवन का चित्रण किया गया है जो मृत जानवरों की खाल उतारकर उसे बाजार में बेचने का कार्य करता है। लेकिन इस पुश्तैनी धंधे से उसे इतनी आमदनी नहीं मिलती कि परिवार का उचित तरीके से जीवन निर्वाह किया जा सके। उसकी आर्थिक स्थिति इस हद तक दयनीय है कि वह अपनी बेटी के लिए सोठ और गुड

का इंतजाम करने में की हिम्मत सखरी को शहर के अस्पताल ले जाने की नहीं होती है। इस तरह से गरीबी से उत्पन्न बरकत की अभावग्रस्तता स्वास्थ्य एवं इलाज से संदर्भित कही जा सकती है।

ऐसे ही 'कच्ची सड़क' शीर्षक कहानी में चित्रित अभावग्रस्तता यातायात की सुविधाओं और सड़क के अभाव से अंतर्संबंधित है। गाँव में एक बार सड़क बन जाने के बाद सरकार दशको तक उसकी सुध नहीं लेती हैं। ठेकेदार भी सड़क बनाने के नाम पर खाना पूर्ति करते हैं तथा ऐसे में महीने के भीतर ही सड़क बह जाती है, जबकि वह सरकारी कागजों में दशको बनी रहती है। प्रशासनिक अधिकारी, ठेकेदार, नेता, मंत्री आदि उस सड़क के नाम पर हर साल सरकार से बजट पास करवाते हैं लेकिन उस बजट का उपयोग सड़क बनाने के लिए नहीं बल्कि अपने निजी हित में करते हैं। सरकारी अमलो प्रशासनिक अधिकारियों, ठेकेदारों तथा इंजीनियरों आदि के द्वारा की जाने वाली इस बंदरबांट के कारण ही गाँव की सड़के हमेशा कच्ची ही रहती हैं जिनके परिणामस्वरूप ग्रामीण जीवन यातायात की सुविधाओं के अभाव में व्यतीत होता है। इस व्यवस्था में नेताओं और प्रशासनिक अधिकारों द्वारा पहले नियमों को अपने अनुरूप बनवाया जाता है, फिर संवैधानिक व्यवान्याओं से खेलने की शरुआत होती है। ऐसे ही नहीं ठेकेदार, इंजीनियर, प्रबंधक एवं उद्घाटनक को निर्धारित किया जाता है। विसिल्लाह जी की ग्रामीण स्तर पर स्थानीय शासन, नेताओं, अधिकारियों आदि के द्वारा खेले जाने वाले भ्रष्टाचार के खेल को बड़ी ही सहजता एवं स्वाभाविकता के साथ उजागर करती है। आग, तूफान से पहले, मुरीद, दरखे के लोग, अलिया धोबी और पावभर गोश्त और पुण्यभोज आदि कुछ ऐसी भी कहानियाँ हैं जिनमें बिस्मिल्लाह जी अर्थाभावजन्य सुविधाओं एवं अभावग्रस्तताओं का यथार्थपरक चित्रण किया है। ये अभावग्रस्तताएँ नगरीय जीवन की समरूपता में ग्रामीण जीवन में अधिक विरुपता के साथ व्याप्त होती हैं, जिनके कारण लोगों को शिक्षा, स्वास्थ्य आवास, वस्त्र, भोजन-पानी, सड़क, बिजली, यातायात आदि से वंचित होना पड़ता है।

ऋणग्रस्तता की समस्या-

निर्धनता और अभावग्रस्तता की स्थिति ही मनुष्य को कर्जदार बनाती है। जब व्यक्ति की आवश्यकताएँ पूरी नही होती हैं तब उन्हें दूरी करने के लिए धनाभाव के कारण वह सरकार, सामंत, साहूकार, सेठ पूजपति आदि से कर्ज लेता है। साधारण व्यक्ति को बैंक आदि सरकारी संस्थाएँ आसानी से कर्ज नहीं देती हैं ऐसे में किसी मोटे आसामी या सेठ-साहकार आदि से कर्ज लेने लिए उसे विवश होना पड़ता है। ये सेठ-साहूकार कम समय के लिए बहुत अधिक दरो पर कर्ज देते हैं जिसके कारण कर्ज की राशि बहुत जल्द ही मूलधन से कई अधिक गुना हो जाती है। निश्चित आय का साधन होने के कारण निम्न आर्य-वर्ग के लोग इस कर्ज को अदा नहीं कर पाते हैं, जो कि निरंतर बढ़ता रहता है। यही स्थिति ऋणग्रस्तता के नाम से जानी जाती है, जिसमें समाज का निम्न वर्ग अपनी मूलभूत आवश्यकता पूरी करने के लिए सामंतों, साहूकारों, सेठो आदि से कर्ज लेता है लेकिन व्याजदर अधिक होने के कारण वह कर्ज की राशि की आदायगी नहीं कर पाता है। कुछ मामलो में यह ऋष्ण ग्रस्तता तो मनुष्य के साथ आजीवन चलती रहती है। कर्ज देने वाला सामंत-साहूकार जब कर्ज की अदायगी के लिए कड़े रुख अपनाते हुए कर्जदार के साथ मारपीट या फिर उसका और उसके परिवार का शारीरिक शोषण करता है तो कर्जदार को आत्महत्या करने के लिए विवश होना पड़ता है।

कुछेक संदर्भों में यह ऋणग्रस्तता तो एक पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती रहती है जिसमें पिता द्वारा लिए गए कर्ज को पुत्र या फिर पुत्र का पुत्र चुकाता है। अब्दुल बिस्मिल्लाह जी ने अपनी अनेक कहानियों में ऋणग्रस्तता और इससे उत्पन्न जीवनगत विसंगतियों का चित्रण किया है। क्रमशःशीर्षक कहानी में निर्धनता एवं अभावग्रस्तता की स्थिति में परिवार को कर्ज का सहारा लेना पड़ता है। कहानी के पात्र पिताजी आजीवन के बोझ तले दबे दिखाई देते हैं। पारिवारिक जिम्मेदारियो से भागकर उनका बड़ा बेटा घर से अलग हो जाता है और

आजीविका शुरू करने के लिए पिताजी से पाँच सौ रुपयों की मांग करता है। पिता खंडहर घर को गिरवी रखकर उसे पाँच सौ रूपये देते है जिसके बाद पास के गाँव में सब्जी की दुकाने खोलता है। घर का खर्च चलाने के लिए पिताजी सड़क के किनारे लगे किलोमीटर के पत्थर की रंगाई का कार्य शुरू करते हैं। इसके लिए दो सौ रूपये का कर्ज लेकर वे पेंट खरीदते हैं लेकिन पेंट नकली होने के कारण बारिश में धुल जाता है और कर्ज के पैसे भी बेकार चले जाते हैं। लेकिन इसके बावजूद वे हार नहीं मानते हैं और "मखदूब प्रधान से पाँच सौ रुपये कर्ज लेकर बाबा ने गाँव से आठ किलोमीटर दूर के कस्बे में परचून की छोटी-सी दुकान खोल ली। अब वे प्रतिदिन कस्बे तक जाते और रात गये घर-वापस आते। मगर दुकान चली नहीं। अस्सी प्रतिशत माल उधारी पर उठ गया और मखदूम प्रधान का कर्ज तक न उतर सका था पिताजी कर्ज की इस स्थिति से निकल नहीं पाते हैं। उन्हें अपने बड़े बेटे के यहाँ नौकरी करनी पड़ती है तथा पुत्री के विवाह तथा छोटे लड़के की पढ़ाई के लिए फिर से कर्ज लेना पड़ता है। इस ऋण का व्याज चुकाते-चुकाते उसका पूरा परिवार तबाह हो जाता है।

'खण्ड-खण्ड आदमी' शीर्षक कहानी में पीढ़ी दर पीढ़ी चलने वाले कर्ज की स्थिति का चित्रण किया गया है। अकबर के पिता परिवार चलाने के लिए कर्ज लेकर लकड़ी का व्यापार शुरू करते हैं लेकिन उनका व्यापार चलता नहीं जबकि कर्ज व्याज सहित दिन-प्रतिदिन बढ़ता जाता है। अकबर की माता चूड़ियाँ पहनाने का पुश्तैनी धंधा करती हैं लेकिन अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा के दृष्टिगत पिताजी यह धंधा भी बंद करवा देते हैं। पिताजी की मृत्यु के बाद अकबर अपनी माँ के साथ धंधे को फिर से शुरू करता है लेकिन उसे इस धंधे से इतनी आमदनी प्राप्त नहीं होती कि पिता द्वारा लिए गए कर्ज को चुकाया जा सके। पिता के द्वारा लिए कर्ज को चुकाने के लिए उसे अपना पुश्तैनी घर बेचना पड़ता है, जिसके बाद उनके सम्मुख सर ढकने के लिए छत की समस्या उत्पन्न हो जाती है। इस कहानी के माध्यम से बिलिल्लाह जी ने अपने जीवन की आरम्भिक स्थिति को अभिव्यक्ति प्रदान की है।

कहानीकार के पिता की भी यही स्थिति थी उनका व्यवसाय भी नहीं चल सका था तथा उन्होंने भी अपनी पत्नी के व्यवसाय को बंद कराने की भरपूर कोशिशें की थी और अंत में ऋणग्रस्त अवस्था में ही परलोकवासी हो गये जिसके बाद बिस्मिल्लाहजी को भोजन और आवास संबंधी संख्यातीत समस्याओं का सामना करना पड़ा था।

'इज्जतदार' नामक कहानी में भी कर्ज के बोझ तले दबे परिवारों की प्रमुख स्थिति का सजीव चित्रण किया गया है। कहारी के प्रमुख पात्र खालिक के पिता जमींदार परिवार से ताल्लुक रखते हैं लेकिन समय करवट बदलता है और जमींदारी जाने के बाद शहर आकर रिक्शा चलाना पड़ता है। शहर आने से पहले खालिक की आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय होती है। वह जीवन-यापन के लिए अपने सगे-संबंधियो दोस्तों तथा अनेक जानने-पहचानने वाले से कर्ज ले लेता है और फिर इससे कभी मुक्त नहीं हो पाता है। निरंतर बढ़ते कर्ज के कारण खालिक अवसाद ग्रस्त हो जाता है तथा मंदिरा का सेवन करने लगता है। असहाय होकर पूँजी के रूप बची अपनी पत्नी की एकमात्र नथ को भी गिरवी रखकर कर्ज चुकाने का प्रयास करता है। इस तरह से खालिंक का सम्पूर्ण जीवन ऋणग्रस्त बना रहता है।

विभिन्न कहानी-संग्रह में संग्रहित बिस्मिल्लाह जी की और भी अनेक कहानियाँ हैं जिनमें ऋणग्रस्तता की स्थिति, उसके कारणों, दुष्परिणामों आदि का विवेचन-विश्लेषण करते हुए बताया गया है कि व्यक्ति प्रत्येक तरह से विवश होकर ही कर्ज के लिए साहूकारों-सामंतों आदि का शरणागत बनता है। जब पेट की आग बर्दाश्त नहीं होती, जब फटे-पुराने वस्त्र उसकी लज्जा और मान-मर्यादा की रक्षा में असफल होने लगते है जब वह खुले आसमान के नीचे जीवन व्यतीत करना दूभर हो जाता है तभी सामान्य व्यक्ति कर्ज लेने की ओर कदम बढ़ाता है लेकिन ब्याज दर आमदनी की अपेक्षा अधिक होने के कारण वह इन लक्षणों से कभी, उऋण नहीं हो पाता है। ऐसे में उसका सम्पूर्ण जीवन समस्याओं और पीड़ाओ से ग्रसित हो जाता है।

रोजगार एवं आर्थिक विकास की समस्या-

बेरोजगारी आधुनिक भारत की सर्वाधिक विकट समस्या है जो कि दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। मध्यकाल से पूर्व जब तक भारतीय समाज वर्ण व्यवस्था के आधार पर चलता था तब तक बेरोजगारी की समस्या नहीं थी। दरअसल शास्त्रों एवं धर्मग्रंथों में प्रत्येक वर्ण के लिए किए जाने वाले कार्य निर्धारित थे और समाज का प्रत्येक वर्ण उसी व्यवस्था के अनुरूप अपना-अपना व्यवसाय करता था। मुस्लिम आक्रांताओं के आगमन के बाद वर्ण व्यवस्था को धक्का लगा जिसके बाद व्यवसाय वर्णसम्मत न होकर मनमानी तरीके से होने लगे। अंग्रेजी शासन के समय भारतीय समाज पर वर्णव्यवस्था के स्थान पर जाति-व्यवस्था को अधिरोपित कर दिया गया जिसके बाद समाज के किसी भी व्यक्ति के लिए कोई निश्चित रोजगार नहीं रह गया। कुटीर एवं हथकरघा उद्योगों को नष्ट करके औपनिवेशिक शासन ने बेरोजगारी को भारत की सार्वकालिक समस्या बनाने की आधारशिला रखी थी जो कि नगरीकरण, बढ़ती जनसंख्या, मशीनीकरण, रोजगारपरक शिक्षा का अभाव, कौशल विकास का अभाव, वोट बैंक की राजनीति, भ्रष्टाचार आदि कारणों से आज अपने उत्कर्ष की ओर बढ़ने लगी है।

बिस्मिल्लाह जी ने 'मुर्दे चेहरो के लिए' तथा क्रमशः आदि कहानियों में बेरोजगारी की स्थिति तथा उसके कारणों व दुष्परिणामों आदि का यथार्थपरक चित्रण किया है। भारत ग्राम प्रधान देश है तथा गाँवों के प्रवास शिक्षा, रोजगार आदि की तलाश में शहरों की ओर तेजी से पलापन कर रहे है। लेकिन शहरों में भी भारत की आबादी के सापेक्ष रोजगार बहुत कम है। ऐसे में पढ़े-लिखे युवाओं को भी शहरों में जाकर औद्योगिक मजदूरी करने को विवश होना पड़ रहा है। जो सरकारी भर्तियाँ हो रही है वे एक तो 'ऊंट के मुँह मे जीरे' के समान होती हैं, दूसरे भ्रष्टाचार, प्रशासनिक असफलता एवं राजनीतिक हस्तक्षेप आदिकारणों से या तो पारदर्शी तरीके से नहीं हो पाती हैं या फिर योग्य उम्मीदवारों की उपेक्षा करके

राजनीतिक, प्रशासनिक पकड़ रखने वाले तथा घूस देने वाले अयोग्य उम्मीदवारों को मिल जाती है जो कि व्यवस्था में घुसकर आद्यंत अपना हित साधने में लगे रहते हैं। जो व्यक्ति गाँवों में ही रहकर अपना रोजगार शुरू करने की अभिलाषा रखता है उसके पास लागत योग्य पूँजी ही नहीं होती है। यदि वह बैंक का आश्रय लेना चाहे तो बैक उसे नियमों-विधानों में ही उलझाए रखती है और अंत में वह हार मानकर बेरोजगार बैठ जाता है। रोजगार की इस समस्या को बिल्लिल्लाह जी ने महामारी, तीसरी औरत, फीडबैक, कैलेंडर, चमगादड़, दुलहिन, नायिका तथा जीवन आदि कहानियों में अभिव्यक्ति प्रदान की है।

बेरोजगारी की तरह ही आर्थिक विकास की समस्या भी समकालीन भारत की एक प्रमुख समस्या रही है। जैसा कि विवेच्च प्रकरण की पूर्वपीठिका में उल्लिखित हो चुका है कि अंग्रेजी शासन द्वारा बनायी गयी भारत की दुर्दांत आर्थिक स्थिति को सुधारने का उत्तर दायित्व भारत की जनता द्वारा चुनी गयी लोकतांत्रिक सरकारों का था और इसी उत्तरदायित्त्व के निवर्हन के दृष्टिगत सरकार ने भूमि सुधार, उद्योगों का विकास, पंचवर्षीय योजनाओ का आरम्भ, कृषिगत सुधार, खाद्यान्न निर्भरता, विभिन्न प्रकार की कृषिगत एवं गैर-कृषिगत क्रांतियों का प्रवर्तन, लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना, आर्थिक उदारीकरण आदि से संबंधित है।

बिस्मिल्लाह जी ने अपनी 'सुलह' नामक कहानी में पुलिस थानों में चलने वाली रिश्वतखोरी का बड़ा ही यथार्थपरक चित्रण किया है। जमींदार पं॰ रामदीन शुक्ल हलवाहे के लड़के महादेव की अनायास ही पिटाई कर देता है। महादेव थाने में रपट लिखवाता है लेकिन पं॰ रामदीन थाने के दरोगा का रिश्वत खिला देता है। इसके बाद दरोगा जी महादेव पर सुलह करने का दबाव बनाने लगता है। जब रामदीन दरोगा को और पैसो की लालच देता है तब दरोगा सुलह न करने पर महादेव पर केस करने की धमकी देता है। इसी तरह से 'तूफान से पहले' शीर्षक कहानी में शिक्षण संस्थाओं में व्याप्त भ्रष्टाचार को उजागर किया

गया है। स्कूल के संस्थापक, व्यवस्थापक और अध्यापक सभी भ्रष्टाचार में लिप्त हैं। स्कूल बनवाने के नाम पर जो जमीन ली जाती है उसमें आधे पर ही स्कूल बनता है, शेष को ऋषि-शिक्षा के नाम पर खाली रख दिया जाता है, जबकि वहाँ ऋषि की पढ़ाई नहीं होती है। स्कूल की इमारत के नाम पर ढेर सारा पैसा इकट्ठा किया जाता है लेकिन स्कूल की कोठरियों की संख्या में कोई वृद्धि नहीं होती है। विभिन्न कहानी-संग्रहों में संग्रहित बिस्मिल्लाह जी की इसी तरह की और भी अनेक कहानियाँ हैं जिनमें राजनीति, प्रशासनिक भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, कालाबाजारी, संस्थागत चोरी आदि का स्वाभाविक चित्रण किया गया है।

सर्वहारा वर्ग में व्याप्त पिछड़ेपन की समस्या-

सर्वहारा वर्ग को शोषित वर्ग भी कहा जा सकता है। क्योंकि इस वर्ग की आर्थिक स्थिति सदैव से ही दयनीय रही है इसलिए न केवल अभिजात वर्ग द्वारा इसका प्रत्येक तरह से शोषण किया जाता रहा है अपितु यह वर्ग सदैव से ही विकास की दौड़ में भी पिछड़ रहा है। इस तरह से पिछड़ापन सर्वहारा वर्ग की प्रमुख और सार्वकालिक समस्या रही है। छोटे-छोटे कृषक, खेतिहर और मील मजदूर, दिहाड़ी मजदूर एवं नौकर आदि सर्वहारा वर्ग के अंतर्गत आते हैं जो कि विकास की दौड़ में अभी भी बहुत पीछे हैं। सर्वहारा वर्ग के पिछड़ेपन को ही दर्शाता है- "तुम जिस दर्द को झेल रहे हो उसे मैं समझता हूॅं। लेकिन वह उतना महत्वपूर्ण नहीं जितना उन लोगों का दर्द जो पेट भर अन्न और तन भर वस्त्र के लिए तड़प रहे हैं। अपनी पीड़ा को उनकी पीड़ा के सामने रखकर देखो तुम्हें लगेगा तुम्हारी पीड़ा छोटी पड़ गई है। फिर जिस व्यवस्था में तुम जी रहे हो, वह सामंती व्यवस्था का ही दूसरा संस्करण है।" इसी तरह से 'आग' शीर्षक कहानी में भी सर्वहारा वर्ग के पिछड़ेपन के कारण प्रादुर्भूत दयनीय स्थितियों का स्वाभाविक चित्रण किया गया है।

निम्नवर्गीय परिवार की मुन्नी कहानी की प्रमुख पात्र है। मुन्नी का पति चोरी-डकैती और लूटपाट करके अपने परिवार का भरण-पोषण करता है लेकिन अनेक बार पुलिस द्वारा

पकड़े जाने के कारण मुन्नी के विवाह में मिले सारे गहने उसकी जमानत कराने में ही बिक जाते हैं। 'अधर्म युद्ध' नामक कहानी में भी सर्वहारा वर्ग के पिछड़ेपन की दशाओं का चित्रण किया गया है। कहानी का प्रमुख पात्र एक अध्यापक है जिसे नियुक्ति से लेकर खाने-पीने और रहने तक अनेक असुविधाओं का सामना करना पड़ता है और अंत में वह रहने के लिए भंडारे की शरण लेता है। इसी तरह से बिस्मिल्लाह जी की रफ-रफ मेल, तूफान से पहले, लड़के, साल भर का त्यौहार, खुशी, दो बूढ़े तथा रैन बसेरा आदि कहानियों भी सर्वहारा वर्ग के पिछड़ेपन की समस्याओं का चित्रण किया गया है।

शोषक एवं शोषित वर्ग के मध्य का संघर्ष-

बिस्मिल्लाह जी ने अपनी अनेक कहानियों में शोषक अर्थात् उच्चवर्ग, अभिजातवर्ग, पूँजीपति एवं सामंत आदि तथा शोषक अर्थात् कृषक, मजदूर, श्रमिक आदि के बीच के आपसी संघर्षो का भी चित्रण किया है। जैसा कि पूर्व में बताया जा चुका है कि औद्योगीकरण, मशीनीकरण, भूमण्डलीकरण और बाजारवाद आदि वैश्विक अवधारणाओं ने प्रत्येक समाज में शोषक और शोषित वर्ग के बीच के आपसी संघर्षों में व्यापक वृद्धि कर दी है। कारण यह है कि इन विचारधाराओं के प्रभावस्वरूप विश्व भर में योग और आपूर्ति दोनों में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। इसलिए उद्योगों पर कम लागत में अधिक उत्पादन करके मुनाफा कमाने का दबाब बढ़ा है। औद्योगिक प्रतिस्पर्धा के इस दौर में उद्योगपति उत्पादन को बढ़ाने के लिए श्रमिकों और मजदूरों से अधिक मेहनत करवाते हैं तथा बदले में उन्हें बहुत कम पारिश्रमिक देते हैं। क्योंकि शोषितवर्ग के पास आय का कोई स्रोत नहीं है। इसलिए ये शोषक वर्ग के चंगुल में आसानी से फँस जाते हैं। इसी तरह से सामंत, साहूकार, महाजन और जमींदार आदि भी किसानों, मजदूरों तथा श्रमिको को कर्ज आदि देकर उनका शारीरिक और आर्थिक शोषण करते हैं।

शोषकवर्ग शोषित वर्ग को अपने नियंत्रण में रखने के लिए या फिर यों कहलें कि गरीबों पर अपना प्रभुत्व जमाने के लिए उस पर अनेक तरह के अन्याय और अत्याचार करता है। क्योंकि संसाधन संपन्न होने के कारण राजनीति, प्रशासन, न्याय आदि संबंधी नियम-कानून को यह पहले ही खरीद चुका होता है इसलिए न्याय, नियम और विधान भी सदैव इसी वर्ग के पक्ष में रहते हैं। साम्यवादी विचारधारा से प्रभावित बिस्मिल्लाह जी ने अपनी अनेक कहानियों में न केवल शोषितों की स्थिति एवं उनके संघर्ष का चित्रण किया है बल्कि इसवर्ग के प्रति अपनी सहानुभूति भी प्रकृत की है। 'खाल खीचने वाला' शीर्षक कहानी का प्रमुख पात्र भुनेसर निम्नवर्ग का एक साधारण व्यक्ति है जो कि मृत जानवरों की खाल निकालकर उसे बेचता है और उससे होने वाली आमदनी से अपना और अपने परिवार का गुजर-बसर करता है। लेकिन उच्चवर्गीय व्यापारी उसका भी शोषण करते हैं। भुनेसर से मरे हुए जानवरों की खाल बेचने पर आधी रकम की मांग तो करते ही है, साथ ही उसे अपने यहाँ बेगारी करने को भी विवश करते है। भुनेसर व्यापारियों के यहाँ मुफ्त में काम करता है। और जब इन्ही व्यापारियों के पास खाल बेचने जाता है तो उसे खाल के बदले बहुत कम दाम दिया जाता है। बड़े मियाँ तो भुनेसर से बलात श्रम भी करवाता है।

'यह कोई अंत नहीं' नामक कहानी में शहर के साहूकार तथा व्यापारी बीड़ी मजदूरों का आर्थिक शोषण करते दिखाई देते हैं। वे मजदूरों से दिन-रात मेहनत करवाते हैं तथा मजदूरी के नाम पर तीन रुपये पकड़ा देते हैं। मजदूरों के कार्यों में कोई न कोई कमी निकालकर इस राशि में भी कटौती कर ली जाती है। व्यापारियों और साहूकारों के शोषण ही परेशान होकर बीड़ी मजदूर हड़ताल कर देते हैं जिसमे उन्हें ग्रामीण और शहरीय मजदूरों का भी साथ मिलता है। इसी तरह 'खिलाड़ी' शीर्षक कहानी में हाजी साहब जिन्ना के नाम से महाविद्यालय स्थापित करके ग्रामीणों, अध्यापकों एवं कर्मचारियों का शोषण करना चाहते है जिसके लिए गरीब एवं अशिक्षित ग्रामीणों से वे एतद्विषयक प्रस्ताव भी पारित करवा लेते हैं।

उपर्युक्त विवेचन-विश्लेषण के आधार पर उपसंहारात्मक रूप से कहा जा सकता है कि बिस्मिल्लाह जी की कहानियों में अंतर्भुक्त आर्थिक चेतना का स्वर विविध विषयी एवं अत्यधिक ऊँचा रहा है। उन्होंने आधुनिक समाज में व्याप्त जीवन के प्रत्येक आर्थिक पहलुओं को छुआ है तथा किसी भी वर्ग की किसी भी परिस्थिति को कथानकीय ताने-बाने में बुनने में उन्होंने कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी है तथा समसामयिक समाज की आर्थिक स्थिति का अभिव्यक्तिपरक प्रतिनिधित्व करने में उनकी कहानियाॅं पूर्णतःसमर्थ हैं।

2.1 सामाजिक चेतना का संदर्भ

एक समग्र कथाकार की प्रकृति उपन्यासों की तरह ही अब्दुल बिस्मिल्लाह की कहानियों में व्याप्त रही सामाजिक चेतना भी बहु-विषयी एवं विविध आयामी रही है। जिस तरह से उन्होंने अपने उपन्यासों में युगीन देशकाल एवं वातावरण की सामाजिक स्थितियों-परिस्थितियों, प्रवृत्तियों, घटना-व्यापारों एवं चित्तवृत्तियों एवं संगतियों-विसंगतियों आदि को अभिव्यक्ति प्रदान की है ठीक उसी तरह से अपनी कहानियों में भी उन्होंने समसामयिक भारतीय समाज के विविध पक्षों एवं संदर्भों का यथार्थपरक चित्रांकन किया है। इस चित्रांकन में हिन्दू और मुस्लिम दोनों समाजों की वर्तमानता रही है लेकिन यद्यपि वर्णन-विवेचन की दृष्टि से प्रधानता मुस्लिम समाज में प्रकीर्णित संगतियों-विसंगतियों आदि के चित्रण की ही दिखाई देती है। जो कि स्वानुभूतिजन्य एवं भोगे हुए यथार्थ दोनों रूपों में कहानीकार की वर्गीय परिस्थिति को भी अनिश्चित करती है। इसी तरह से वैसे तो बिस्मिल्लाह जी ने अपनी कहानियों में समाज में प्रचलित अच्छी रीतियों, लोककल्याणकारी प्रयासों, मानवतावादी मूल्यों, स्थापनाओं व मानदण्डों आदि का भी चित्रण किया है लेकिन एक समसामयिक साहित्य-सर्जक अथवा प्रगतिशील कहानीकार के रूप में उनकी दृष्टि अधिकांशत: सामाजिक विद्रूपताओं तथा यथास्थितिवादी परम्पराओं मानदण्डों पर ही केन्द्रीत रही है।

अपनी कहानियों में वे सामाजिक विसंगतियों, कुरीतियों, दुत्सित प्रथाओं अमानवीय परम्पराओं, आवश्कताओं, समस्याओं अस्वाभाविक घटनाओं, परिवर्तनों तथा अवांछनीय परिस्थितियों, प्रवृत्तियों एवं मनोवृत्तियों आदि को ही कथानकीय प्रदान करते दिखाई देते हैं। इस तरह से कह सकते है कि एक कहानीकार के रूप में बिस्मिल्लाह जी की सामाजिक चेतना अत्यधिक व्यापक आयामों वाली रही है जिसे समग्रता और सम्पर्कता से समझने के लिए कुछ स्वतंत्र प्रकरणों में विभक्तकर देना समीचीन प्रतीत होता है।

जातिप्रथा एवं छुआछूत की समस्या-

एक सामाजिक विसंगति के रूप में जाति प्रथा भारतीय समाज में प्राचीनकाल से ही वर्तमान रही है। भारतीय समाज में व्यक्ति की जाति का निर्धारण उसके कर्म से न होकर जन्म से होता है, अर्थात् मनुष्य जिस जाति में जन्म लेता है, उसी जाति का माना जाता है, फिर वह कितना भी उत्कृष्ट या निकृष्ट कर्म करें, उसकी जाति परिवर्तित नहीं हो सकती है। दरअसल कर्म आधारित वर्ण व्यवस्था ही कालांतर में विकृत होकर जन्म आधारित जाति व्यवस्था का प्रादुर्भाव बनी। इस जाति व्यवस्था ने भारतीय समाज की संरचना को अत्यधिक जटिल बना दिया। प्रत्येक वर्ष से संबंधित जातियों की सामाजिक स्थिति वैसे तो वर्ण व्यवस्था के अनुरूप ही रही लेकिन क्योंकि प्रत्येक जाति ने अपने से निम्न जाति का अनुसंधान करना प्रारम्भा कर दिया जिसके कारण जातियों का विभाजन उपजातियों में होने लगा। इस जाति प्रथा ने सर्वाधिक अहित शूद्र वर्ण से संबंधित निम्नजातियों का किया। कारण यह है कि शूद्र वर्ण से अंतसंबंधित होने के कारण एक तो इनके सामाजिक और आर्थिक अधिकार पहले से ही बहुत सीमित थे दूसरे जाति व्यवस्था के उदय ने शूद्र वर्ण को भी अनेक जातियों-उपजातियों में विभक्त कर दिया। ऐसे में जो ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य वर्ण के लोग पहले शुद्ध वर्ण का शोषण और उसके साथ भेदभाव का व्यवहार करते थे उनकी सामाजिक स्थिति एवं प्रभुत्व जस का तस बना रहा लेकिन शुद्र वर्ण में जो जातियाँ सामाजिक रूप से निचले

पायदान पर स्थितथीं उन्हें उपर्युक्त तीनों वर्णों के अतिरिक्त अपने वर्ण की अपने से ऊँची स्थिति रखने वाली जातियों का भी शोषण, दमन एव भेदभाव का व्यवहार झेलना पड़ता है। ऐसे में जाति-व्यवस्था शोषित, पीड़ित दलित एवं निम्न जाति के लोगों के अमानवीय शोषण का आधार बनी। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद शिक्षा, औद्योगीकरण, संवैधानिक अधिकारों के प्रति जागरुकता, भूमण्डलीकरण, बाजारवाद, वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास तथा सूचना कांति आदि कारणों से भारतीय समाज में जाति व्यवस्था के बंधन कुछ ढीले अवश्य हुए हैं लेकिन उसका पूर्णरूपेण टूटना अभी भी बाकी है। क्योंकि यह व्यवस्था लोगों के मन-मस्तिष्क तक घर कर चुकी है इसलिए इससे धीरे-धीरे ही मुक्त हुआ जा सकता है और आज का भारतीय समाज इस मुक्ति की ओर अग्रसर भी है। वैसे तो हिन्दू समाज की अपेक्षा मुस्लिम समाज पर जाति व्यवस्था का प्रभाव नगण्य है लेकिन यह समाज भी शिया, सुन्नी, लोदी, सैयद, बरेलवी तथा लखनवी आदि जातियों में विभाजित है इससे इनकार नहीं किया जा सकता है।

बिस्मिल्लाह जी ने अपनी दंगाई, बैरंग चिट्ठी तथा आलिया धोबी और पाव भर गोश्त आदि कहानियों में जाति-प्रथा की विसंगतियों का यथार्थपरक चित्रण किया है। 'दंगाई' कहानी का प्रमुख पात्र बसंतु शहर में होने हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिक दंगे से प्रभावित होकर अपने गाँव में साम्प्रदायिक दंगा करवाना चाहता है। चौक इलाके के गुंडों को उसने अपनी ही जाति-बिरादरी के लोगों पर गुंड़ई करते हुए देखा है। जाति-व्यवस्था का सर्वाधिक विकृत दुष्परिणाम अस्पृश्यता अथवा छुआछूत की भावना का विकास है जिसे सभ्य समाज के लिए एक अभिशाप या कोढ़ कहा जा सकता है। यद्यपि संविधान ने अपने सत्रहवें अनुच्छेद द्वारा सैद्धांतिक रूप से इसका समूलनाश कर दिया है लेकिन व्यावहारिक रूप से कमोवेश हिन्दू एवं मुस्लिम समाजों में यह अभी भी एक अमानवीय व्यवहार के रूप में व्याप्त है। इस अस्पृश्यता की भावना के अंतर्गत प्रत्येक जाति के लोग सामाजिक स्तर पर

अपने से नीची जाति के लोगो के साथ खान-पान विवाह आदि का संबंध नहीं रखते हैं तथा उनकी दृष्टि में निम्न जाति के लोग अछूत होते हैं।

हिन्दू समाज के संदर्भ में जहाँ दलित या निम्न जातियों को अस्पृश्यता की भावना के कारण ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्णो की प्रताड़ना एवं उत्पीड़न का शिकार होना पड़ा वही मुस्लिम समाज में धोबी नाई, धनिया, चुड़िहार और जुलाहा आदि निम्न जातियों को रोढ़ा, पठान एवं सैय्यद आदि उच्चजातियों द्वारा छुआछूत की दृष्टि से देखा गया। बिस्मिल्लाह जी ने अपनी अनेक कहानियों में अस्पृष्यता अथवा छुआछुत की भावना एवं इससे प्रादुर्भूत होने वाली विद्रूपताओं का चित्रण किया है। 'अलिया धोबी और पावभर गोश्त' शीर्षक कहानी में अस्पृश्यता की भावना के कारण ही शेख, पठान, सैय्यद आदि युसूफ धोबी की दावत को अस्वीकृत कर देते हैं। उनके लिए एक निम्न जाति के धोबी के यहाँ दावतखाना इस्लामी मसावत के प्रतिकूल प्रतीत होता है। मुस्लिम समाज में भी छुआछूत की भावना अपने सर्वाधिक विकृत स्वरूपों में व्याप्त रही है जिसका वर्णन करते हुए एक कहानी में कहानीकार लिखता है- "जो शेख हैं, जो सैय्यद सिद्दकी और खान हैं, वे नाइयो धोबियों और जुलाहों, धुनियों से नफरत करते हैं। जैसे किसी जमाने में ब्राह्मण और क्षत्रिय शुद्रो से नफरत करते थे।.... इस मुल्क में शुद्रो ने इसीलिए तो इस्लाम को कबूल किया था कि उन्हें बराबरी का दर्जा मिलेगा पर वह नहीं हुआ। बराबरी सिर्फ मस्जिद तक मौजूद है। बाहर समाजी जिंदगी में वही ऊंच-नीच आज तक मौजूद है। हमारे गाँव में धोबी बहुत हैं। इसमें शक नहीं कि ये मुसलमान है, कलमागो हैं। लेकिन यह हमारी चारपाइयों पर नहीं बैठ सकता। हम इनके यहाॅं खाना नहीं खा सकते।"

यौनिकता की समस्या-

यौनिकता आधुनिक समाज की एक प्रमुख समस्या बन गयी है जिसमें स्त्री-पुरुष या लड़की-लड़के के बीच अनैतिक यौन संबंध स्थापित किया जाता है। भूमण्डलीकरण और

बाजारवाद के प्रभाव से जब से भारतीय समाज पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण करने लगा है तब से समाज में यौनिकता की समस्या अपना विकराल रूप धारण करने लगी है। दरअसल पश्चिमी संस्कृति 'फी सेक्स' एवं 'फी लव' की हिमायती है तथा उसमें नग्नता की व्यापकता भी अधिक है जो कि अल्पवय में ही मनुष्य में वासना की भावना प्रादुर्भूत कर देती है जिसके परिणामस्वरूप कम उम्र के लड़के-लड़कियाॅं विवाह से पूर्व ही यौन-संबंध स्थापित करने लग जाते हैं। उनकी वासना में निरंतर वृद्धि होती रहती है जिसके कारण विवाह के बाद, अपनी यौन इच्छाओं की पूर्ति के लिए वें पर स्त्री-पुरुष के साथ अनैतिक यौन संबंध स्थापित करने लगते हैं। पाश्चात्य संस्कृति का अनुगामी होने के कारण भारतीय समाज भी अब नग्नता के साथ वासना परोसने लगा है जिसके कारण विवाह से पूर्व एवं विवाह के बाद अधिक से अधिक यौन संबंध स्थापित करना एक फैशन सा बन गया है। महानगरों या शहरों में जब से लिव-इन-रिलेशनशिप की संस्कृति प्रादुर्भूत हुई है तब से इस यौनिकता या अनैतिक यौन संबंधो को सामाजिक स्वीकृति भी मिलने लगी है जिसमें विवाह से पूर्व ही लड़की-लड़के पति-पत्नी की तरह रहते हैं।

वर्तमान समय की भौतिकतावादी चकाचौंध तथा ईंटरनेट के माध्यम से हुए संचार के तीव्र विकास ने अवैध यौन संबंधों को और भी बढ़ावा दिया है। ये अवैध यौन संबंध भारतीय समाज में मुख्यत: तीन रूपों में दिखाई देते हैं जिनमे से पहला स्वरूप विवाह से पूर्व स्थापित होने वाला यौन संबंध होता है तो यौनिकता की दूसरी प्रकृति में विवाहेत्तर स्थापित होने वाले यौन संबंधों की परिगठित किया जाता है। अवैध यौन-संबंधो की तीसरी एवं संर्वाधिक वीभत्स प्रवृत्ति वेश्यावृत्ति की होती है जिसमे गरीब, शोषित, पीड़ित एवं उपेक्षित स्त्रियों या लड़कियाँ अपना जीविकोपार्जन करने के लिए पैसों के बदले अपने जिस्म को बाजारों में बेचती है। बिस्मिल्लाह जी ने इन्द्रधनुष तथा नरलीला आदि कहानियों में यौनिकता की विभिन्न प्रकृतियों और परिणामों का चित्रण किया है। अवैध यौन संबंध अर्थात् यौनिकता चाहे विवाह से पूर्व की हो या फिर विवाह के बाद की, या फिर वेश्यावृत्ति के रूप में वह अपने

सभी रूपों में सर्वाधिक अहित स्त्रियों-लड़कियों का ही करती है क्योकि भारत की पितृ सत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था में महिलाओं के लिए जो मान, मर्यादा एवं सम्मान की परिधि खींची गयी है यौनिकता उसका अतिक्रमण करती है। विवाह से पूर्व एवं विवाह के बाद अवैध यौन संबंध स्थापित करने वाली स्त्रियों को जहाँ पंचायत, तलाक, पारिवारिक कलह घर से निकासी, शारीरिक यातना आदि का सामना करना पड़ता है वही वेश्यावृत्ति करने वाली महिलाओं को सामाजिक अपमान तिरस्कार, यौन-शोषण एवं मानसिक प्रताड़ना आदि का साक्षात्कार करना पड़ता है।

दृष्टांत स्वरूप नरलीला नामक कहानी में बड़कू और ननकू नामक दो भाई मिलकर एक औरत खरीदते हैं जो कि कुछ समय बाद धोबियाने के किसी युवक दुलारे से प्रेम करने लगती है और दुलारे भी उसे अपनी पत्नी बनाना चाहता है। किसी दिन बडकू उस औरत कमली को काम करते हुए देखता है तो आग-बबूला हो जाता है। वह उसे उसे वहा ँ ं से खींचकर लाता है और दोनों भाई मिलकर जाति पंचायत बुलाते हैं और दुलारे से कमली की खुराकी के बदले ढाई हजार रूपये खर्च मांगते हैं। पंचायत उनके विवाद का निपटारा नहीं कर पाती है तो दोनो थाने की शरण लेते हैं। इस तरह से सामाजिक एवं शारीरिक-मानसिक रूप से कमली की छीछालेदर हो जाती है क्योंकि उसने पितृ सत्तात्मक समाज की बेडियाँ तोड़ी होती हैं। इसी तरह अब्दुल बिस्मिल्लाह ने अपनी अनेक कहानियों में संयुक्त परिवार में हो रहे नित्य-प्रति विघटन की समस्या को चित्रित किया है जो कि समसामयिक भारतीय समाज की सर्वाधिक प्रभावशाली विसंगति है। भूमण्डलीकरण, बाजारवाद मानवीय आवश्यकताओं-महत्वाकांक्षाओं आदि में वृद्धि, मनुष्य जीवनभर अर्थ का एकाधिकार औद्योगीकरण, नगरीकरण स्वार्थ की प्रवृत्ति, पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण, अर्थ-संग्रह की भाषायी वर्चस्व या आधिपत्य की भाषा तथा पश्चिमी जीवनगत स्वाधीनता की अभिलाषा आदि कारणों से आपके भारतीय प्रमाण में संयुक्त परिवार तेजी से विघटित होकर एकाकी परिवार में परिवर्तित हो रहे हैं। गरीबी, बेरोजगारी, बेकारी, पिछड़ापन तथा व्यक्तिवादिता

आदि घटकों के कारण भी जो संयुक्त परिवार किसी समय भारतीय संस्कृति की पहचान और प्रवृत्ति हुआ करते थे वे आज टूटने लगे हैं। स्त्री हो या पुरुष, युवा हो या बुजुर्ग आज सभी किसी न किसी तरह से संयुक्त परिवारों में उत्पन्न हुई विघटन की समस्याओं से जुझ रहे हैं। जिन लोगो को एकांत प्रिय है उन्हें तो परिवारों के विग्रह से अधिक समस्या नहीं होती है लेकिन जो लोग संयुक्त परिवार के अभ्यस्त हो चुके हैं उन्हें इस विघटन के बाद अनेक तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।

'रैन बसेरा' नामक कहानी संग्रह में संग्रहित 'लफंगा' शीर्षक कहानी संयुक्त परिवारों में होने वाले विघटन की स्थिति तथा कारण आदि का स्वाभाविक चित्रण करती है जिसमे केवल पठान का हिस्सा ही विघटित नहीं होता बल्कि परिवार के सदस्यों का भी विभाजन हो जाता है- "उसी रोज बँटवारा हो गया। मकान का एक हिस्सा भैय्या के कब्जे में तथा दूसरा हिस्सा छोटे भैय्या के। चुनिया छोटे भैय्या की ओर और वह बड़े भैय्या की ओर।" बड़ा भाई डॉक्टर है तथा छोटा भाई कपड़े सिलने का कार्य करता है। माता-पिता की मृत्यु के बाद बड़े भाई ने अपनी पारिवारिक जिम्मेदारी उठाते हुए छोटे भाई एवं बहन की भी देखरेख करता है। हालाँकि आज के समय कोई भी व्यक्ति परिवार के दूसरे सदस्य की जिम्मेदारी अपने सिर पर नहीं लेना चाहता है। और जो बच्चे अनाथ हो जाते हैं उनकी स्थिति तो और भी बदतर हो जाती है। लेकिन इस कहानी में बड़े भाई ने अपने छोटे भाई तथा बहनों के साथ ऐसा नहीं होने देता है। हालाँकि वह अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों को बखूबी निभाता है लेकिन फिर भी परिवार को विघटित होने से नहीं बचा पाता है। दोनों भाइयों के बीच में जमीन-जायदाद आदि का बँटवारा हो जाता ही है, साथ ही बहनों का भी बँटवारा हो जाता है। 'इन्द्रधनुष' कहानी में भी पारिवारिक विघटन की इसी समस्या का चित्रण किया गया है जिसमें तीनों लड़के अपनी माँ एवं बहनों से अलग हो जाते हैं तथा उनसे कोई संबंध नहीं रखते हैं। अपने पेट पालने के लिए उनकी माँ को कॉलेज में माई बनकर कार्य करना पड़ता है। कई संदर्भों में देखा जाता है कि लड़के अपने माँ-बाप से अलग हो जाते हैं या फिर उन्हें

अलग कर देते हैं। ऐसे में उनके माँ-बाप को जीवन-निर्वाह के लिए कभी भीख मांगना पड़ता है तो कभी वृद्धावस्था में भी मजदूरी करनी पड़ती है या फिर उन्हें वृद्धाश्रम का शरणागत होना पड़ता है।

बिस्मिल्लाह जी ने 'इन्द्रधनुष' कहानी के माध्यम से पारिवारिक विघटन से प्रादूर्भूत इसी विसंगति को व्यक्त करने का प्रयास किया है। सर्वज्ञात है कि आधुनिक परिवेश में व्यक्ति संयुक्त परिवार के बीच स्वयं को कुंठित पाता है। इस कुंठा का एकमात्र आधार उसकी बेरोजगारी या अर्थाभाव ही होता है। अर्थ के अभाव में या फिर बेकारी की स्थिति में उसे परिवार से पर्याप्त महत्त्व या सम्मान नहीं मिल पाता है। ऐसे में परिवार में कलह की स्थिति उत्पन्न होती है जो कि मध्यमवर्गीय संयुक्त परिवारों के विघटन का सर्वप्रमुख कारण होती है। आज के रिश्ते-नाते एवं पारिवारिक संबंध अर्थ पर ही केन्द्रित हैं ऐसे में अर्थहीन या बेरोजगार व्यक्ति का संयुक्त परिवार में घुटन महसूस करना स्वाभाविक है। कारण यह है कि उसे भलीभांति ज्ञात है कि यदि उसकी आर्थिक स्थिति ठीक नहीं रहेगी तो उसकी पत्नी, माता-पिता, भाई आदि सभी उसे अपमानित महसूस करवाएंगे, इसके बाद परिवार में आपसी कलह बढ़ेगी और इस परिवारिक कलह को संयुक्त परिवार के विघटन का प्रमुख कारण मानते हैं। पारिवारिक कलह के कारण ही कहानीकार की माता-पिता एवं स्वयं कथाकार का उसकी पत्नी के संबंध विच्छेद हुआ था जिसका मूल आधार आर्थिक विपन्नता थी। इसलिए बिस्मिल्लाह जी इस बात को भली-भांति समझते हैं और इस स्थिति को अनेक कहानियों में अभिव्यक्ति भी प्रदान की है।

'खण्ड खण्ड आदमी' नामक कहानी में हाजी साहब और उनके छोटे भाई बनी मियाॅं जमीन-जायदाद के लिए होने वाली पारिवारिक कलह के कारण ही अलग हो जाते हैं। बिस्मिल्लाह जी की ऐसी और भी अनेक कहानियाॅं है जिसमें या तो आपसी लड़ाई के कारण पति-पत्नी के बीच विवाह-विच्छेद हो जाता है या फिर पत्नी अपने गरीब पति को

छोड़कर किसी संपन्न व्यक्ति का दामन थाम लेती है जो की पारिवारिक विघटन का सर्वाधिक विकृत परंतु बुनियादी कारण कहा जा सकता है।

वैवाहिक जीवन की सफलता एवं असफलता की समस्या-

वैसे तो बिस्मिल्लाह जी ने अपनी कहानियों में सफल एवं असफल दोनों प्रकार के वैवाहिक संबंधों की स्थितियों, प्रवृत्तियों, कारणों एवं परिणामों आदि का स्वाभाविक चित्रण किया है लेकिन उनकी दृष्टि असफल वैवाहिक संबंधों में निहित कारणों एवं परिणामों के अनुसंधान पर अधिक केन्द्रित रही है। सफल दाम्पत्य संबंधों का हमें मरुस्थल, खुशी, एहसास, कानून, ऊँगलियाँ तथा विदूषक आदि शीर्षक कहानियों में देखने को मिलता है। 'मरुस्थल' कहानी में प्रेम विवाह करने वाले प्रभु एवं शांता का वैवाहिक जीवन अत्यधिक शांतिमय और सुखमय दिखाई देता है। प्रभु की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है, वह छोटी सी नौकरी करके अपने परिवार का जैसे-तैसे भरण-पोषण करता है लेकिन फिर भी पति-पत्नी दोनों खुश हैं तथा दोनों में एक-दूसरे के प्रति प्रेम सहयोग एवं समर्पण की भावना दिखाई देती है।

यही स्थिति 'खुशी' नामक कहानी के श्रीबाबू और उनकी पत्नी की भी है। श्रीबाबू एक छोटी-सी नौकरी करके अपने परिवार का गुजारा करते हैं लेकिन उनकी पत्नी जानकी इससे खुश है। श्रीबाबू अपने सहपाठी मित्र के बड़े नेता बन जाने के बाद उसे अपने घर आने के लिए आमंत्रित करते हैं, जिसे वह स्वीकार कर लेता है। इसके बाद पति-पत्नी की खुशियों का ठिकाना नहीं रहता और वे दोनो अपनी आर्थिक विपन्नता की उपेक्षा करते हुए उसके स्वागत की तैयारी में जुट जाते हैं। इस समय तो जानकी का उत्साह तो अपने चरम पर होता है। वह अपनी पड़ोसन से सौ रुपये उधार लेकर पति के मित्र के लिए खाने का प्रबंध करती है। दोनो पति-पत्नी हंसी-खुशी से आगंतुक की यथेष्ट आवभगत करते हैं। इसी तरह से एहसास, कानून एवं विदूषक आदि कहानियों में भी वैवाहिक जीवन सफलता एवं

शांतिमय स्थिति आदि का चित्रण किया गया है। लेकिन बिस्मिल्लाह जी ने असफल वैवाहिक जीवन को दर्शाने वाली कहानियाँ अधिक लिखी है। उनकी दंड, इन्द्रधनुष, मुरीद, दीवार, पशु, बाजीगर, जीना तो पड़ेगा, मिट्ठा, पगला राजा एवं बैरंग चिट्ठी आदि कहानियों में दाम्पत्य जीवन की असफलताओं या फिर यों कहें कि वैवाहिक जीवन की समस्याओं का यथार्थपरक चित्रण देखने को मिलता है। वैवाहिक जीवन की इस असफलता के अनेक कारण रहे है जिनमें, गरीबी, अशिक्षा, पिछड़ापन, अन्याय, अत्याचार, अनैतिक, यौन संबंध, बेमेल विवाह की प्रथा, बहु विवाह की प्रथा, दहेज प्रथा, मेहर, हलाला तथा बहुपत्नी प्रथा आदि को प्रमुख घटक माना जा सकता है।

'दंड' नामक कहानी में शोषण एवं अंधविश्वास के कारण वैवाहिक जीवन में समस्या उत्पन्न होती है। नंद की पत्नी लखिया को गाँव का एक लड़का छेड़ देता है जिसे वह अपने पति को बताती है। नंद उल्टे लखिया के चरित्र पर ही संदेह करने लगता है तथा उसे अनेक प्रकार से प्रताड़ित करने लगता है। इस प्रताड़ना एवं शक के कारण दोनों के वैवाहिक जीवन में अशांति एवं पारस्परिक विश्वास की समस्या उत्पन्न हो जाती है।

'इन्द्रधनुष' नामक कहानी में भी शोषण एवं उत्पीड़न से ही वैवाहिक जीवन में खटास उत्पन्न होती है। मनोहर अपनी पत्नी नंदिनी को बेवजह मारता पीटता है इसलिए दोनों का वैवाहिक जीवन अशांतिमय हो जाता है। इसी तरह पूँजी, माल और मुनाफा नामक कहानी में बहुविवाह और अनमेल विवाह के कारण बैवाहिक जीवन में समस्या उत्पन्न होना दिखाया गया है। कहानी का प्रमुख मात्र हारुण रशीद बीबी-बच्चों वाला होते हुए भी अपने से बहुत छोटी उम्र की लड़की के साथ निकाह करता है। नवविवाहिता के पिता की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं होती है इसलिए मजबूरी में वह बाबूजी नामक दलाल के माध्यम से अपनी लड़की का विवाह अधेड़ और शादीशुदा हारुण रशीद के साथ कर देता है जो कि निष्क्रिय एवं निठल्ला व्यक्ति होता है। हारुण रशीद दिनभर शतरंज का खेल खेलता रहता है ऐसे में

वह नव विवाहिता की इच्छाओं की पूर्ति और भावनाओं की कदर कैसे कर पाएगा। इस अनमेल और बहुविवाह से हारुण रशीद के वैवाहिक जीवन में अनेक तरह की समस्याएँ उत्पन्न हो जाती है दरअसल अनमेल विवाह की स्थिति में कम आयु की कुँवारी लड़कियाँ ही नहीं पिसती हैं। जिन्हें उनके निर्धन माता-पिता स्वार्थ वश समृद्धशाली लोगों को उपयोग के लिए सौंप देते हैं। ये लोग पहले से ही शादीशुदा होते हैं और उम्र में भी बहुत बड़े होते हैं। ऐसे में इनके द्वारा नवविवाहिताओं का सही ढंग से उपभोग भी नहीं किया जा सकता है, जो कि वैवाहिक जीवन को समस्याग्रस्त करने का आधारिक कारण कहा सकता है। अनमेल विवाह की तरह ही बहु-विवाह प्रथा को भी बिस्मिल्लाह जी ने अपनी अनेक कहानियों में दाम्पत्य जीवन की असफलता का प्रमुख कारण बताया है। इन कहानियों में उन्होने वंशवृद्धि हेतु पुत्र की कामना, पत्नी की झगड़ालू प्रवृत्ति एवं उसकी सार्वकालिक बीमारी, पत्नी की मृत्यु, काम भावना की अतृप्ति, अति कामुकता, चरित्र हीनता, पति या पत्नी की नपुंसकता तथा संतानोत्पत्ति की सामर्थ्य का अभाव आदि को यह विवाह का प्रमुख कारण बताया है। इसी तरह दहेज प्रथा को भी उन्होंने अपनी अनेक कहानियों में दाम्पत्य जीवन की असफलता का प्रमुख कारण बताया है जो कि अंतत: तलाक या विवाह-विच्छेद की स्थिति में परिणत हो जाता है।

'तलाक के बाद' नामक कहानी में साबिरा और सत्तार को न चाहते हुए भी एक-दूसरे को केवल इसलिए तलाक देना पड़ता है क्योंकि सत्तार के पिता का आरोप है कि विवाह के समय साबिरा के पिता ने एक बराती को शराब पिलाने से इंकार कर दिया था। इसी आरोप के आधार पर सत्तार का पिता दोनों के मध्य जबरन तलाक करवा देता है। उपर्युक्त कारणों के अतिरिक्त पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था के अहं को भी बिस्मिल्लाह जी ने वैवाहिक जीवन को समस्याग्रस्त करने के कारण के रूप में चित्रित किया। पुरुष प्रधान भारतीय समाज सदैव से ही स्त्रियों को सीमाओं में देखने का अभ्यस्त रहा है। ऐसे में आधुनिक परिवेश एक पत्नी के रूप में जब स्त्रियाँ इन सीमाओं या मर्यादाओं का तनिक भी

अतिक्रमण करती है, जो कि समय के अनुरूप आवश्यक है तो पुरुष के अहं को तुरंत चोट लग जाती है। ऐसे में वह मारपीट करने और पत्नी से संबंध तोड़ने को भी आतुर हो जाता है।

स्त्रियों का शोषण एवं उनका संघर्ष-

एक प्रगतिशील कथाकार के रूप में अब्दुल बिस्मिल्लाह की सामाजिक चेतना समकालीन भारतीय समाज में होने वाले स्त्रियों के शोषण एवं संघर्ष से भी घनिष्ठ संबंध रखती है। उन्होंने अपनी अनेक कहानियों में जहाँ स्त्रियों के विविध प्रकार के शोषणों को उजागर किया है वहीं कुछेक कहानियों में शोषण से संघर्ष करती स्त्रियों का भी चित्रण किया है। 'यह कोई अंत नहीं' शीर्षक कहानी में सरवर की माँ अपने ही पुत्र के शोषण का शिकार होती है। बीड़ी बनाने का कार्य करके वह सरवर को पढ़ा-लिखाकर मास्टर बना देती है और जर्जर अवस्था तक पहुँच जाने के बाद भी वह बीड़ी बनाने का धंधा नहीं छोड़ती है जबकि सरवर साहब अपने माँ के इस धंधे को बंद कराना चाहते हैं। इस तरह से एक माँ का अपने पुत्र के साथ वैचारिक संघर्ष उत्पन्न हो जाता है। 'तलाक के बाद' कहानी में शोषित एवं पीड़ित नारी के रूप में साबिरा की जीवन स्थिति का चित्रण किया गया है। साबिरा को अपने ससुराल में ससुर द्वारा अनेक तरह से प्रताड़ित एवं अपमानित किया जाता है। अपने पिता की एक छोटी सी गलती की सजा वह गाली-गलौज और अपमान सहकर भुगतती है। लेकिन इन सबके बावजूद उसका तलाक हो जाता है। तलाक के बाद वह अपने पिता के घर रहने लगती है लेकिन यहाँ उसकी मुश्किले और बढ़ भी जाती हैं। घर का सारा कार्य करने के बाद भी भाई-भाभी उसके साथ उपेक्षा पूर्ण व्यवहार करते हैं। इसलिए- "जब भी वह कोई काम करने बैठती है, इत्मीनान से नहीं कर पाती कोई-न-कोई बाधा उठ खड़ी होती है। कभी अम्मा पुकार लेंगी, कभी भाव का कोई हुक्म लगा जाएगा, कभी कोई आ गया तो चलो कुंडी खोलो, कभी कोई चीज मतलब चाकू या माचिस गायब है तो चलो उसको ढूढ़ो। सारा ठेका जैसे साबिरा ने ही ले रखा है। कितने कपड़े धोने को रखे हैं! अभी-

अभी खाना शुरू किया और चलो दरवाजा खोलो, साबिरा उठकर खटखटाते हुए दरवाजे की ओर बढ़ गयी। अगर देर हुई हो रज्जब भाई हत्थे से उखड़ जाएँगे।।" इस तरह से ससुराल की तरह ही मायके में भी साबिरा का अनेक तरह से शारीरिक एवं मानसिक शोषण होता रहता है जिसे विवशता वश उसे सहना पड़ता है।

इसी तरह से 'दरबे के लोग' नामक कहानी में उच्चवर्ग द्वारा निम्नवर्ग की स्त्रियों के आर्थिक एवं शारीरिक शोषण का चित्रण किया गया है। उच्चवर्ग के लोग निम्न वर्ग की स्त्रियों को बहुत कम पैसे देकर उनसे मजदूरी भी करवाते है तथा उनका यौन शोषण भी करते हैं। खुतेजा और उसके परिवार की तरह यादि किसी ने अपना मांस सौंपने (सेक्स करने) से इंकार किया तो उसे मजदूरी से ही नहीं बल्कि दरबे से ही निकाल दिया जाता है। इसलिए आर्थिक रूप से विपन्न बुनकर मजबूरी में अपनी औरतों को उन्हें सौंप देते हैं जहाँ- "कारीगर भैंस का मांस खाते हैं और गिरस्त लोग औरत का। इन्हें घर की औरत का मांस अच्छा नहीं लगता है। उनकी इस अच्छा लगने वाली वृत्ति को इन दरबों में रहने वाले लोग हमेशा से संतुष्ट करते आए हैं और जिसने संतुष्ट किया, उसे जमाने की सबसे नायाब चीज अर्थात् मजदूरी मिलती रही।"

इसी तरह 'नरलीला' नामक कहानी में बड़कू और ननकू नामक दोनो भाई जिस औरत को खरीद कर लाते हैं उसे उसके पिता ने मजबूरी में किसी परदेशी के हाथ बेचा होता है। उस पर देशी ने अंत मे कमली को ननकू और बड़कू को बेच देता है। ये दोनों उम्र में उससे बहुत बड़े होते हैं इसलिए वह दुलारे नामक धोबी से प्रेम करने लगती है। जब यह बात बड़कू को पता चलती है तो वह कमली को बहुत मारता-पीटता है और उस पर अनेक तरह का अन्याय व अत्याचार करता है। पुरानी हवेली, एहसास, इन्द्रधनुष, मिट्ठा, दंड आदि कहानियों में भी स्त्रियों पर होने वाले अनेक तरह के अनाचारी एवं उनके विषयी निर्मम शोषण का चित्रण किया गया है।

जिस तरह से बिस्मिल्लाह जी ने अपनी कहानियों में शोषित स्त्री को समुचित स्थान दिया है उसी प्रकार से उन्होंने शोषण से संघर्ष करती स्त्रियों को भी अपनी अनेक कहानियों में अभिव्यक्तिपरक सम्मान प्रदान किया है। 'पुरानी हवेली' कहानी में महिला सुधारगृह में सुधार के नाम पर महिलाओं के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है तथा उन्हें धंधा करने को विवश किया जाता है। जब यह शोषण एवं उनके साथ होने वाला अन्याय-अत्याचार असहनीय हो जाता है तब देवबाला के नेतृत्व में संस्था की लड़कियाँ और औरतें अधीक्षिका के खिलाफ विद्रोह कर देती हैं और उसकी पिटाई भी करती हैं। इसी तरह 'मिट्ठा' नामक कहानी में मिठ्ठा साहूकार के सामने अपने पिता गंगादीन को गिड़गिड़ाते देखती है तो उसका खून खौल उठता है और वह साहूकार को फटकार लगाती है। 'दंड' कहानी में लखिया का पति नंदू लखिया के चरित्रहीन होने का संदेह करके उसके साथ मार-पीट करता है। व्यक्तित्व से ईमानदार एवं स्वाभिमानी लखिया नंदू के खिलाफ खुला विद्रोह तो नहीं करती है लेकिन उसका अंतर्मन विद्रोही हो जाता है और वह मन ही मन विचार करती है कि- "मुझे क्यों पीटते हो? क्या कोई मेरी नियत खराब थी? अरे जिसने तुम्हारी मेहरा की इज्जत पर हाथ डाला, उसे जाकर पीटो, उसे जान से मार डालो।" इसी तरह मुरीद, एहसान, पशु एवं इन्द्रधनुष आदि कहानियों में भी शोषण से संघर्ष करती स्त्री का विद्रोही रूप चित्रित हुआ है।

उपर्युक्त विवेचन-विश्लेषण के आधार पर सारांशिक स्वरूप में कहा जा सकता है कि एक प्रगतिशील कहानीकार के रूप में अब्दुल बिस्मिल्लाह की सामाजिक चेतना का आयाम अत्यधिक व्यापक एवं विविधताओं से परिपूर्ण रहा है। उन्होंने अपने समय के समाज को जैसा देखा या भोगा है वैसे ही उसे कथानकीय स्वरूप प्रदान कर दिया है। सामाजिक एवं यथार्थवादी प्रकृति की उनकी कहानियों में समकालीन भारत की सामाजिक परिस्थितियों, प्रवृत्तियों, मनोवृत्तियों, घटना-व्यापारों संगतियों-विसंगतियों तथा आवश्यकताओं-महत्वाकांक्षाओं आदि का सर्वोत्तम शब्दांकन हुआ है।

4.3 राजनीतिक चेतना के प्रति सजगता

एक साहित्यकार के रूप बिस्मिल्लाह जी की राजनीतिक चेतना अपने देशकाल और वातावरण की राजनीतिक परिस्थितियों, प्रवृत्तियों, घटनाओं, परिवर्तनों, मनोवृत्तियों तथा उसमे व्याप्त विसंगतियों और विद्रूपताओं के साथ घनिष्ठता से अंतर्सबंधित रही है। समकालीन राजनीति की स्थिति-परिस्थिति आदि का सूक्ष्मातिसूक्ष्म विवेचन-विश्लेषण पूर्ववर्ती अध्याय में किया जा चुका है, इसलिए यहाँ उसका दुहराव समीचीन नहीं प्रतीत होता है। यहाँ हम विभिन्न प्रकरणों के अंतर्गत अनुशीलन, विवेचन द्वारा सीधे यह जानने का प्रयास करेंगे कि एक कथाकार के रूप में बिस्मिल्लाह जी अपनी कहानियों में समसामयिक भारत की राजनीतिक स्थितियों परिस्थितियों के प्रति कितना और किन संदर्भों में अपनी सजगता बनाए रखने में सफल रहे हैं। सरल शब्दों में कहा जाए तो इस प्रकरण के अंतर्गत हम यह देखने और खोजने का प्रयास करेंगे कि बिस्मिल्लाह जी ने अपनी कहानियों में किन राजनीतिक घटकों का कितनी मात्रा में वर्णन-विवेचन क्रिया है, जैसा कि पूर्व में वर्णित हो चुका है कि आजादी के बाद से लेकर अब तक भारतीय राजनीति में जहाँ अनेक तरह की घटनाएँ और परिवर्तन हुई वही इसमें असंख्य अवांछनीय घटको का भी समावेश हुआ है जिसके कारण समकालीन भारत की राजनीति असंख्य विसंगतियों और विरूपताओं की कोषागार बनकर रह गयी है।

आजादी मिलने के तुरंत बाद साम्प्रदायिक दंगे भड़क जाते हैं, जो कि राजनीतिक तुष्टीकरण के दुष्परिणाम थे। इसी वर्ष भारत और पाकिस्तानका पहला युद्ध होता है और गांधी जी की हत्या भी इसी वर्ष के आरम्भ में हो जाती है, जो कि सबसे बड़ी राजनीतिक घटना कहीं जा सकती है। इसके बाद भारत का एकीकरण, संविधान का लागू होना, प्रथम आम चुनाव भाषा के आधार पर राज्यों का गठन, गुटनिरपेक्षता की नीति, भारत चीन युद्ध, भारत-पाक युद्ध, बांग्लादेश का गठन, आपातकाल, सम्पूर्ण क्रांति, भारतीय जनता पार्टी,

समाजवादी पार्टी, बहुजन समाज पार्टी आदि राजनीतिक दलों का उदय, परमाणु परीक्षण, कारगिल युद्ध, तथा केन्द्र में भारतीय जनता पार्टी की सरकार की पहली बार पूर्ण बहुमत प्राप्त होना आदि आजादी के बाद से लेकर आजतक की भारतीय राजनीति में घटित होने वाली प्रमुख घटनाएँ है? इसी तरह से भ्रष्टाचार, घोटाला, वोट बैंक की राजनीति, पूँजीपतियों एवं सामंतों आदि का प्रभुत्व, पार्टी फंड के नाम पर धन उगाही करना, पैसे लेकर गुंडों-हत्यारों आदि को चुनावी टिकट प्रदान करन, दल-बदल प्रणाली, चुनावी वादा खिलाफी, जबरन वोट डलवाना, शिक्षित और साधारण वर्ग को राजनीति से दूर रखना, समान प्रतिनिधित्व का अभाव, परिवारवाद, भाई-भतीजावाद, तानाशाही, लाल फीताशाही, अवसरवादिता चारित्रिक पतन, घोर स्वार्थपरायणता, यथास्थितिवादिता, वोटों की खरीद-फरोख्त वोट के लिए साम्प्रदायिक दंगे करवाना, धर्म, जाति, मत-मजहब आदि के नाम पर समाज को आपस में लड़वाना और उनका राजनीतिक उपयोग करना, जनप्रतिनिधियों द्वारा जनता की उपेक्षा एवं उनका शोषण तथा आम आदमी में राजनीतिक नेतृत्व करने की क्षमता का अभाव होना आदि राजनीतिक विसंगतियाँ और विद्रूपताएँ भारतीय राजनीति से सार्वकालिक संबंध रखती हैं और इन्ही का चित्रण बिस्मिल्लाह जी ने अपनी कहानियों में किया है जिसे अग्रलिखित उपविभागों के अंतर्गत भलीभाँति समझा जा सकता है।

भ्रष्टाचार की समस्या-

भ्रष्टाचार समकालीन भारतीय राजनीति की प्रमुख प्रवृत्ति बन चुका है। नीचे से लेकर ऊपर तक सभी नेता, सांसद, विधायक आदि किसी न किसी तरह से भ्रष्टाचार में संलिप्त अवश्य होते है। चाहे सरकारी योजनाएँ बनाने का कार्य हो या फिर उनके क्रियान्वयन का जनता के हित में कोई नियम-विधान बताने का कार्य हो या फिर नियमों के अनुपालन का सभी स्तर पर भ्रष्टाचार अपने सर्वाधिक विकृत रूप में व्याप्त दिखाई देता है। नेता जनप्रतिनिधि के रूप में जनता का ही हक खा रहे हैं और पूँछने पर अपने पद का दुरुपयोग

करते हैं। बिस्मिल्लाह जी ने अपनी लफंगा, सुलह और दूसरे मोर्चे पर आदि कहानियों में राजनीति भ्रष्टाचार को उजागर किया है। इसी तरह नरलीला, बालक स्वामी, कर्मयोगी, मुक्ति और तीर्थयात्रा नामक कहानी में भारतीय प्रशासनिक व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार का चित्रण किया गया है। इसी तरह से आधा फूल, आधा राव एवं बाप नामक कहानी भी अधिकारी वर्ग के अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार एवं रिश्वतखोरी आदि का पर्दाफाश करती है। दूसरा सदमा तथा कर्मयोग आदि कहानियों में नेताओ और प्रशासनिक अधिकारियों की मिलीभगत से होने वाले साधारण लोगों के शोषण, दमन एवं उत्पीड़न को दर्शाया गया है। नेता और प्रशासनिक अधिकारी आपस में साॅंठ-गाॅंठ करके जनता को बेवकूफ बनाते हैं तथा सरकारी योजनाओं से प्राप्ति राशि का गबन कर जाते है। इन दोनों की मिलीभगत से ही सरकार द्वारा विकास योजनाओं के नाम पर आवंटित धनराशि की बंदरबाट हो पाती है।

अवसरवादिता एवं स्वार्थलिप्सा की समस्या

भारत की वर्तमान राजनीति अवसरवादी प्रकृति की है जिसमें प्रत्येक स्तर के नेता अपना व्यक्तिगत स्वार्थ सिद्ध करने के लिए सदैव विभिन्न प्रकार के अवसरों की तलाश में रहते हैं और जैसे ही उन्हें यह अवसर मिलता है, वे सारे मूल्यों, आदर्शों, नैतिकताओं, सिद्धांतों, आदि को ताक पर रखकर सर्वप्रथम अपना हित साधन करते हैं। आज के नेताओ को सत्ता की मलाई ही अच्छी लगती है। इसके लिए वे अपनी पार्टी के मूल्यों-सिद्धांतों पर ठोकर मारकर सत्ताधारी पार्टी के चरण चूमने में भी नहीं हिचकिचाते हैं। इन नेताओ का न तो कोई निश्चित राजनीतिक सिद्धांत होता है और न ही इनके राजनीति में आने का व्यापक उद्देश्य, दलबदल प्रकृति के इन नेताओं का एकमात्र उद्देश्य राजनीति के माध्यम से जनता की सेवा के बहाने व्यवस्था का अंग बनकर अपनी तिजोरी भरना होता है इसलिए भ्रष्टाचार,

दोगलापन, नीति-विहीनता, स्वार्थ लोलुपता, सत्ता के प्रति सदैव आकर्षण एवं असंवेदनशीलता आदि इस कोटि के नेताओ के स्वाभाविक गुण होते हैं।

'ग्राम सुधार' शीर्षक कहानी के नेता टी॰ एन॰ सिंह में अवसरवादिता की प्रवृत्ति कूट-कूटकर भरी हुई दिखाई देती है। वे पहले तो इमलिया गाँव के युवक चानिका गुप्ता के प्रतिवाद से कुपित हो जाते हैं उसका शास्त्रार्थ सुनने के बाद उसके यहाँ ब्राह्मणों के साथ ब्रह्मभोज भी खाते है। इसी अवसर पर चानिका गुप्ता को अकेला पाकर वे उसकी प्रशंसा भी करते है। इसी तरह संगोटी नामक कहानी में नेता डॉ॰ श्याम किशोर रौनका मंदिर-मस्जिद विवाद का फायदा उठाना चाहते हैं। मुस्लिम समाज की सहानभूति पाने तथा अपने को कद्दावर नेता बनाने के लिए वे इस बहुचर्चित विषय पर मुसलमानों का समर्थन करते हैं जिसमे आगामी चुनावों में उन्हें मुस्लिम समाज विजयी बनाकर उनकी राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति में सहायक बने। इस प्रकार से डॉ॰ श्याम किशोर अवसरवादी राजनीति का सर्वोत्तम दृष्टांत उपस्थित करते हैं।

अवसरवादिता की तरह ही स्वार्थलिप्सा या स्वार्थपरायणता भी समकालीन भारतीय राजनीति की एक प्रमुख विसंगति या फिर विशेषता कही जा सकती है। स्वार्थलिप्सा की भावना भी राजनीति में नेताओं को अपना व्यक्तिगत हित सर्वोपरि रखने का वकालत करती है। अपने निजी स्वार्थों की पूर्ति के लिए नेता किसी भी हद तक जाने में संकोच नहीं करते हैं। इसके लिए वे अपनी और अपनी पार्टी के सिद्धांतों, नियमों-विधानों, नैतिकताओं, मूल्यों, आदर्शों आदि की बलि चढ़ाने से भी नहीं हिचकिचाते हैं।

इसी तरह जातिवाद, साम्प्रदायिक दंगे, चुनावी वादाखिलाफी या घोषणाए, सामाजिक वैमनस्यता, मतों की खरीद-फरोख्त, ईवीएम मशीनों के साथ छेड़छाड़, धन एवं बल के सहारे जबरन मतदान करवाना, मतगणना के समय मताधिकारों से लड़कर मतो में हेर-फेर कराना, फर्जी वोट डलवाना तथा फर्जी मतदाता पत्र बनवाना, चुनावी समीकरण बैठाना,

समय-समय पर दल बदलते रहना तथा राजनीतिक दाँव-पेंच खेलना आदि इन नेताओं के चुनावी हड़कंडे होते हैं जिनके सहारे वे अपने राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति करते हैं। इन नेताओं में सेवाभाव, त्याग और बलिदान के स्थान पर स्वार्थ, कुटिलता, झूठ और षड़यंत्र की भावना व्याप्त होती है इसलिए गरीबों, शोषितों, वंचितों एवं पीड़ितों का शोषण करते या फिर उनके अधिकारों, हको आदि को हड़पते हुए न तो इन्हे तनिक भी दया आती है और न ही इस कुकृत्य के बाद इन्हें किसी निर्लज्ज नेता बनने का पहला गुण मानी जाती है। बिस्मिल्लाह जी ने 'यह कोई अंत नहीं' तथा 'दंगाई' आदि कहानियों के माध्यम से भारतीय राजनीति में अंतर्निहित स्वार्थपरायणी प्रवृत्ति को उजागर करने का सफल प्रयास किया है।

चुनावी राजनीति की समस्या

चुनावों को भारतीय प्रजातंत्र का पर्व कहा जाता है। भारत की चुनाव प्रक्रिया गाँव के ग्राम पंचायत से आरम्भ होकर क्षेत्र पंचायत, जिला पंचायत, जिला परिषद, विधान सभा, लोकसभा, विधान परिषद, राज्यसभा एवं राष्ट्रपति तक जाती है। इनमें से कुछेक को छोड़कर लगभग अधिकांश में भारतीय जनता की प्रत्यक्ष भागीदारी होती है। यद्यपि आज के मतदाता अपने मत के मूल्य को समझने लगे हैं लेकिन राजनीतिक भ्रष्टाचार, प्रशासन की अनदेखी, मूल्यहीनता, गुंडागर्दी, अन्याय, अत्याचार, आतंक एवं धमकी आदि कारणों से वह अभी भी अपने मत का स्वतंत्र एवं समुचित प्रयोग नहीं कर पाते है। ऐसे में जनता द्वारा सही जन प्रतिनिधि चुनने की संभावना बहत कम रह जाती है। चुनाव किसी भी स्तर के हो मतदान की प्रक्रिया गाँव के सरकारी स्कूलो में ही संपन्न होती है। ऐसे में गाँव के धनबली और बाहुबली या तो भोले-भाले ग्रामीणों की बहला-फुसला लेते हैं या फिर उन्हें मारने-पीटने की धमकी देकर अपनी जाति या पार्टी के व्यक्ति को बोट दिलवा देते है। इस प्रकार से गाँवों में होने वाला मतदान पूर्णतः निष्पक्ष तरीके से नहीं हो पाता है। जातिवाद, मांस एवं

मदिरा का वितरण, जाली मतदाता पहचान पत्र का प्रयोग आदि और भी असंख्य ऐसे घटक हैं जो प्रत्येक चुनाव को अनिवार्य रूप से प्रभावित करते हैं।

बिस्मिल्लाह जी ने अपनी अनेक कहानियों में चुनाव की प्रकृतियों, प्रक्रियाओं और परिणामों में व्याप्त इन राजनीतिक विसंगतियों को अभिव्यक्ति प्रदान की है। उदाहरण के तौर पर 'कागज के कारतूस' कहानी में चुनावों में जातिवाद की महत्ता को दर्शाया गया है। जैसे ही चुनाव नजदीक आते हैं वैसे ही रोजगार के लिए गाँव से शहर गये युवक अपने जाति या धर्म के व्यक्ति को विजयी बनाने के लिए अपना व्यवसाय छोड़ कर गाँव वापस आ जाते हैं और चुनावों में भाग लेते हैं। 'ज्ञानमार्गी' कहानी में अध्यापकों की राजनीति का चित्रण किया गया है। इस कहानी में दो सगे भाई परस्पर विरोधी गुट में शामिल होते हैं तथा अपने-अपने लिए वोट की मांग करते हैं। 'ग्राम सुधार 'नामक कहानी में आम चुनावों के समय की चुनावी स्थिति का चित्रण किया गया है। चुनाव के केन्द्र 'इमलिया' नामक गाँव को चुनाव से पहले कोई नहीं जानता था। अत्यंत पिछड़ा और अज्ञात यह गाँव चुनाव के समय अकस्मात चर्चा में आ जाता है, क्योंकि विशेष जाति-धर्म के लोग रहते हैं जो विभिन्न पार्टियों लिए वोटबैंक का कार्य कर सकते हैं। अशिक्षा और अज्ञान आदि कारणों से इस गाँव की जनता न तो भारत की स्वाधीनता के विषय में कुछ जानती है और न ही चुनाव के बारे में ही उसे कोई जानकारी होती है। पूरे गाँव में एकमात्र युवक चानिका गुप्ता थोड़ा-बहुत शिक्षित है, शेष गाँव वालो का शिक्षा, राजनीति और चुनाव आदि ले कोई लेना-देना नहीं है।

राजनीतिक नेतृत्व के अभाव की समस्या

अक्सर देखा जाता है कि आम आदमी राजनीतिक नेतृत्व करने से बचता है। इसे दूसरे शब्दों में कहना चाहें तो कह सकते हैं की भारत की सक्रिय राजनीति में आम आदमी की भागीदारी केवल एक मतदाता के रूप में ही होती है, राजनेता के रूप में नहीं। इस तरह से कह सकते हैं कि साधारण भारतीय समाज में राजनीतिक नेतृत्त्व का अभाव पाया जाता है।

कारण यह है कि एक तो साधारण व्यक्ति के जीवन मे इतनी अधिक समस्याएँ और जिम्मेदारियाँ होती हैं कि वह चाह कर भी नेता नहीं बना सकता है। दूसरे नेताओं के कुछ स्वाभाविक गुण होते हैं जो कि प्रकृति प्रदत्त होते हैं और उन्हें किसी भी तरीके से, किसी भी मूल्य पर अर्जित नहीं किया जा सकता है। आज के समय में नेता बनने के लिए ज्ञान, साहस, नैतिकता, उच्चादर्श, प्रतिष्ठा, बलिदान, त्याग एवं सेवाभाव आदि का होना आवश्यक नहीं है बल्कि स्वार्थी, कुटिल अवसरवादी, बेईमान भ्रष्टाचारी, अधर्मी, अपराधी, हत्यारा, बलात्कारी, आतंकी, देशविरोधी, गुंडा तथा दिवालिया आदि होना आवश्यक होता है। ऐसे में गाँव का भोला-भाला साधारण आदमी कहां से इन गुणों का संचय करे। और यदि इनके बिना वह राजनीति में प्रवेश करने का प्रयास करेगा तो उसे सर्वप्रथम उसका ही वर्ग-समाज लात मार देगा। बिस्मिल्लाह जी ने 'कागज के कारतूस' एवं 'दंगाई' आदि अनेक कहानियों में राजनीतिक नेतृत्व के अभाव की इस समस्या को चित्रित इसके कारण और परिणाम आदि का भी अनुसंधानपरक विवेचन-विश्लेषण किया है।

उपर्युक्त विवेचन-विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि बिस्मिल्लाह जी अपनी कहानियों में समसामयिक भारतीय राजनीति की परिस्थितियों प्रवृत्तियों तथा इसमें व्याप्त विसंगतियों आदि के प्रति अत्यधिक सजग रहे हैं। गाँव से लेकर महानगर तक, ग्राम-पंचायत से लेकर राष्ट्रपति भवन तक भारतीय राजनीति में जो विसंगतियाँ व्याप्त है उनको उन्होने अपनी कहानियों की कथावस्तु में अनिवार्य रूप से सम्मिलित किया है। उनके द्वारा किए गये राजनीतिक विपन्नता के चित्रण से यह स्पष्ट हो जाता है कि आज की राजनीति कुछ गिने-चुने लोगों के हाथ की कठपुतली बनकर रह गयी है तथा प्रत्येक तरह से भ्रष्टाचार, अनैतिकता, सत्ता लोलुपता एवं स्वार्थपरायणता आदि का ही आतंक है। राजनीति आम आदमी को अपने षड़यंत्रों में ऐसा कर उसे जान-बुझकर अशिक्षा, अज्ञान, अंधविश्वास, धार्मिक कट्टरता, जातीय उन्माद एवं वर्ग विभेद की ओर धकेल रखी है जिससे वह जनता को मतदाता के रूप में भली प्रकार से उपयोग कर सकें। इसी तरह से बिस्मिल्लाह जी

अपनी कहानियों में राजनीतिक चेतना, राष्ट्रप्रेम, संघर्ष परायणता, जागरण, व्यवस्था के प्रति अशांति, समर्पण, सहयोग, कर्तव्यपरायणता एवं निस्वार्थ सेवाभाव आदि राजनीति के सकारात्मक घटको का भी यत्र-तत्र चित्रण किया है, जो कि उन्हें एक तटस्थ एवं यथार्थवादी कहानीकार का अभिधान तो दिलाता ही है, साथ ही उनकी राजनीतिक चेतना की व्यापकता को भी व्यक्त करता है।

4.4 धार्मिक चेतना की वर्तमानता

यद्यपि शिक्षा, विज्ञान, तकनीकि विकास, सूचना एवं संचार क्रांति, भूमण्डलीकरण और बाजारवाद आदि घटको वर्तमान भारतीय समाज की धार्मिक स्थिति में अंतर्निहित अनेक प्राचीन विसंगतियों को विलोपित कर दिया है लेकिन फिर भी ग्रामीण एवं नगरीय समाजों में अभी भी अनेक तरह की धर्म संबंधी विरूपताएँ, कर्मकांड, आडम्बर एवं अंधविश्वास आदि प्रचलित हैं। इनमें भाग्यवाद, जादू टोना, बहुदेववाद तथा भूत-प्रेत में विश्वास आदि को भी जोड़ दिया जाय तो धार्मिक विद्रूपताओं की प्रकृति जटिल एवं इनकी संख्या बहुत अधिक हो जाती है।

अब्दुल बिस्मिल्लाह जी की धार्मिक चेतना अधिक व्यापक एवं अपने देशकाल और वातावरण के सापेक्ष रही है। जिस तरह से उन्होंने अपने उपन्यासों में समसामयिक धार्मिक परिस्थितियों, प्रवृत्तियों, जनचित्तवृत्तियो एवं असंगतियों आदि का यथार्थपरक चित्रण किया है, ठीक उसी तरह से उन्होंने अपनी कहानियों में भी समकालीन भारत की धार्मिक स्थितियों-परिस्थितियों का स्वाभाविक शब्दांकन किया है। क्योंकि बिस्मिल्लाह जी की सामाजिक-धार्मिक सम्बद्धता मुस्लिम धर्म एवं समाज से रही है इसलिए उनकी कहानियों में इस्लाम धर्म में व्याप्त बुराईयों, धार्मिक कुरीतियों, कुप्रथाओं, आडम्बरों, कर्मकांडों आदि का अधिक मात्रा में चित्रण देखने को मिलता है। परंतु इसका यह अभिप्राय नहीं है कि उन्होंने अपनी कहानियों में हिन्दू धर्म में व्याप्त संकीर्णताओं को उपेक्षित कर दिया है। उनके जीवन का

अधिकांश भाग हिन्दू धर्म एवं समाज के सानिध्य में व्यतीत हुआ है इसलिए वे इस धर्म की बारीकियों को भलीभाँति समझते हैं। इसी समझ के अनुरूप उन्होंने अपनी अनेक कहानियों में हिन्दू धर्म से सम्बंधित आडम्बरों, कर्मकांडो आदि का स्वाभाविक चित्रण किया है। दरअसल प्रत्येक धर्म की प्रकृति एवं उद्देश्य एक ही होता है इसीलिए सभी धर्मों की सामान्य प्रवृत्तियाँ भी लगभग एक ही होती हैं।

इसी तरह से विश्वभर में पाए जाने वाले सभी धर्मो में संगतियाँ और विसंगतियाँ दोनों होती हैं, जो कि बहुत हद तक स्थानीय परम्पराओं, भौगोलिक परिस्थितियों तथा प्राकृतिक परिवेश आदि द्वारा नियंत्रित-निर्धारित होती हैं। इसी सिद्धांत के आधार पर इस्लाम एवं हिंदू धर्म में कुछेक तात्विक विभेद पाया जाता है, जबकि दोनों का उद्देश्य मानव का कल्याण करना ही है। अभिकथन का तात्पर्य यह है कि प्रत्येक धर्म मानव जीवन को सुखमय शांतिप्रद तथा चित्त को शुद्धता प्रदान करने वाले ही होते है, जो कि सामाजिक विश्वास के रूप में किसी व्यक्ति को परम्परा से प्राप्त एक पवित्र विश्वास ही होते है। धर्म को संस्कृति का समर्थन प्राप्त होता है तथा धर्म और संस्कृति दोनों मिलकर ही मनुष्य के सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक क्रियाकलापों का निर्धारिण करते है।

इसलिए धर्म के मूल भूत सिद्धांतों को समझ लेने के बाद धार्मिक विसंगतियों की पहचान आसानी से हो सकती है तथा उन विसंगतियो से बचा भी जा सकता है। क्योंकि धर्म की मूलभूत सैद्धांतिकी अत्यधिक जटिल एवं ज्ञानप्रद होती है, जबकि धर्म का पालन करने वाले या फिर धार्मिक परम्पराओं का निवर्हन करने वाले गाॅंव या नगर के भोले भाले लोग इतना अधिक शिक्षित नहीं होते हैं कि धर्म के इस गूढ़ सिद्धांत को समझ सकें। ऐसे में वे धार्मिक मान्यताओं, परम्पराओं आदि की अपने समझ के अनुसार व्याख्या तो करते ही हैं, अपनी सामर्थ्य के अनुरूप ही इनका निर्वहन भी करते हैं। यही से धर्म में विसंगतियाँ उत्पन्न होती है, जिसका मूल कारण अशिक्षा और अज्ञान आदि होता है। इसी सिद्धांत के आधार पर

दुनिया प्रत्येक धर्म में विसंगतियों-विविधताओं का अंतर्भाव होता है तथा इसी स्थिति से होकर संसार के प्रत्येक धर्मानुयायियों को गुजरना पड़ता है।

परम्पराओं और रीति-रिवाजों के संदर्भ में अशिक्षा, अज्ञानता एवं अर्थाभाव के कारण उत्पन्न समस्या

अशिक्षा, अज्ञानता एवं अर्थाभाव की स्थिति में धर्म के भीतर अनेक तरह के अवांछनीय घटकों का अंतर्वेशन हो जाता है। गाँव के लोग अधिक पढ़े-लिखे नहीं होते हैं तथा धर्म के मूलभूत सिद्धांतों का ज्ञान भी उन्हें नहीं होता है। गरीबी तो उनके जीवन का पर्याय ही होती है। ऐसे में भोले-भाले ग्रामवासी अपनी-अपनी समझ और सामर्थ्य के अनुरूप धार्मिक परम्पराओं, मान्यताओं आदि का निर्वहन करते हैं, जिनके कारण बहुदेववाद, भूत-प्रेत में विश्वास, जादू-टोना एवं आडम्बर आदि प्रवृत्तियों का जन्म होता है।

गाँव के लोग परलोक, पुनर्जन्म, स्वर्ग और मोक्ष आदि में पूर्ण विश्वास करते ही हैं इसलिए मस्जिदों-मंदिरों में बैठने वाले मौलवी-पुजारी आदि तीर्थयात्रा, यज्ञ-हवन, गंगास्नान, रोजा, नमाज आदि के नाम पर विभिन्न तरीके से इसका शोषण करते हैं। यदि इस्लाम धर्म की बात करें तो इस्लाम में रोजा को आध्यात्मिक एवं नैतिक उन्नति को सुनिश्चित करने वाला व्रत बताया गया है। इसी तरह जकात इस्लाम धर्म की एक ऐसी विधि है जिसके आधार पर संसार का प्रत्येक मनुष्य ईश्वर प्रदत्त आवश्यक और जीवनोपयोगी वस्तुओं को दूसरों तक पहुँचा सकता है। इससे वह स्वयं को ईश्वर के प्रति कृतज्ञ रख सकेगा तथा अनेक सांसारिक बुराइयों से मुक्त होकर उसकी आत्मा उसके मन-मस्तिष्क को शुद्धता प्रदान करेगी हज की यात्रा भी इस्लाम धर्म में अधिक महत्वपूर्ण मानी जाती है जो कि ईश्वर के प्रति अपर श्रद्धा प्रेम, बंदगी एवं प्रशंसा का द्योतक माना गया है। नमाज, रोजा, जकात, हज तथा एक ही ईश्वर की उपासना आदि इस्लाम के मूलभूत धार्मिक कार्य है जिसको करने के बाद ही

प्रत्येक मुसलमान अपनी आत्मा को शुद्ध एवं मुक्त रखते हुए अल्लाह से संबंध स्थापित करने की सामर्थ्य अर्जित कर सकता है।

यद्यपि वैज्ञानिक प्रगति, शिक्षा का विकास, मशीनीकरण की संस्कृति, आधुनिकीकरण एवं बाजारवाद आदि के चलते इस्लाम के ये धार्मिक कार्य और मूल्य तेजी से प्रभावित हुए हैं और नयी पीढ़ी में इसके प्रति उपेक्षा की भावना दिखाई देती है लेकिन ग्रामीण परिवेश आज भी इनके प्रति आस्तिक बना हुआ है। ग्रामीण लोग अशिक्षित, अज्ञानी एवं निर्धन भले होते हैं, लेकिन धर्म एवं धार्मिक विधानों में उनकी गहरी आस्था होती है। ईश्वर, धर्म, धार्मिक मान्यताओं, रिवाजों तथा परम्पराओं आदि का सर्वोत्तम निर्वहन ग्रामीण महिलाओं के द्वारा किया जाता है। धार्मिक विश्वास को बनाए रखने में ग्रामीण स्त्रियों की आधारिक भूमिका रही है।

बिस्मिल्लाह जी ने अपनी अनेक कहानियों में धार्मिक मान्यताओं एवं विश्वासों का चित्रण किया है, जिनका निर्वहन अधिकांशत: गाँव की स्त्रियों के द्वारा किया जाता है। 'अलिया धोबी' और 'पावभर गोश्त' नामक कहानी में 'मिलाद' का वर्णन मिलता है। मिलाद इस्लाम धर्म में खुदा को याद करने और उसे प्रशन्न रखने के लिए की जाने वाली एक तरह की ईश वंदना है। हिंदुओं में जैसे भजन और कीर्तन होता है वैसे ही मुसलमानों में पीर, पैगम्बर आदि का गुणगान या उससे प्रार्थना मिलाद के माध्यम से की जाती है।

'ग्राम सुधार' शीर्षक कहानी में चित्रित सम्पूर्ण इमलिया गाँव अशिक्षा एवं अज्ञानता का गढ़ है। यहाँ कभी जनगणना तक नहीं हुई है। लोगों को धर्म का ज्ञान भी नहीं है। 'मईम सुमारी' के लिए शहर से दो पढ़े-लिखे युवक इस गाँव में आते हैं तो गाॅंव के हुए सबसे अधिक शिक्षित युवक चानिका गुप्ता के यहाँ रुकते हैं। की जब चानिका अपने गाॅंव की उन्नति का मार्ग पूँछता है तो वे उसे धर्म कि शिक्षा देते है तथा धर्म की महत्ता बताते हुए धर्म के प्रति आस्थावान होने की सलाह देते हैं। चानिका ऐसा ही करता है। वह हिंदू धर्म का

अध्ययन-अध्यापन करता है अपने घर में भगवान राम की मूर्ति स्थापित करके उनकी पूजा-अर्चना करता है। विश्वास है कि उसके इस धार्मिक कृत्य से उसके गाॅंव की उन्नति होगी। इसी तरह से 'कागज के कारतूस' नामक कहानी में भी धार्मिक परम्पराओं, रिवाजों, मान्यताओं आदि के प्रति श्रद्धा व्यक्त की गयी है। वसीउल्ला की माता खुदा से विनती करती है कि वह उसे आर्थिक संकट से बचा ले। ऐसे ही जीनिया के फूल, शीरमाला का टुकड़ा तथा गोरी आदि कहानियों में बिस्मिल्लाह जी ने धार्मिक परम्पराओं, रिवाजों, ईश्वर के प्रति आस्था तथा धर्म की महत्ता का चित्रण किया है।

भाग्यवाद एवं अंधश्रद्धा की समस्या

अंधश्रद्धा एवं भाग्यवाद भी ग्रामीण समाज की प्रमुख समस्याएँ या फिर प्रवृत्तियाँ होती हैं। अंधश्रद्धा का अर्थ आंख मूंदकर किसी पर विश्वास कर लेना या फिर किसी की देखा देखी किसी के प्रति श्रद्धावान हो जाने को कहते हैं। गाॅंव के लोग अधिक शिक्षित एवं ज्ञानी नहीं होते हैं इसमें किसी संदर्भ में उनके भीतर तर्क करने की अधिक क्षमता नहीं होती है। ऐसे में किसी भी धार्मिक कृत्य, व्यवहार आदि को होते हुए देख वे भावुकता में बहकर उसके प्रति भी श्रद्धावान हो उठते है। धर्म के संदर्भ में कहें तो वे सभी धार्मिक कृत्य व्यवहार परम्परा, रीति-रिवाज एवं नियम विधान आदि अंधश्रद्धा के अंतर्गत आते हैं, जिन्हें तर्क एवं विज्ञान की कसौटी पर नहीं कसा जा सकता है, जैसे कि शुभ-अशुभ, शगुन-अपशगुन तथा मंगल-अमंगल आदि की अवधारणा। इसी तरह से ग्रामीणवासी ज्यादातर भाग्यवादी होते हैं अर्थात् कार्य की अपेक्षा भाग्य में उनका विश्वास अधिक होता है। उनके अनुसार ईश्वर ने प्रत्येक मनुष्य को जन्म के साथ ही उसका भाग्य भी लिख देता है तथा जिस मनुष्य की भाग्य में जितना लिखा होता है उसे उससे रंचमात्र भी कम या ज्यादा नहीं मिलता है, फिर चाहे वह कितना भी यत्न कर ले या फिर यत्न ही करें। ग्रामवासी घोर नियतिवादी होते हैं तथा विधि के

विधान में उनकी पूर्ण आस्था होती है इसलिए वे कर्म करने में कम और भाग्य में अधिक भरोसा करते हैं।

बिस्मिल्लाह जी ने अपनी कहानियों में अंधश्रद्धा या अंध विश्वास तथा भाग्यवाद आदि का यथार्थपरक चित्रण करते हुए उनके कारणों और परिणामों की ओर थी संकेत किया है। 'भूत' शीर्षक कहानी में खाँ साहब भूत-प्रेत आदि में विश्वास करते दिखाई देते हैं। उन्होने बचपन में अपनी नानी से किस्सो-कहानियों द्वारा भूतों-प्रेतों का वर्णन भी सुन रखा है। उनकी दृष्टि में भूत बड़े-बड़े दांतों वाले तथा सर पर सींगवाले होते हैं। आदमी को निगल जाने वाले भूतों के शरीर पर काले लम्बे बाल होते हैं जो कि उन्हें डरावना बनाते हैं। इसी तरह से 'चमगादड़' नामक कहानी में भी भूतों-प्रेतों के प्रति लोगों में अंधश्रद्धा की भावना दिखाई देती है। करीम बूढ़े का पोता रात के अंधेरे में जब उसके लिए मुर्गे का सालन लेकर जा रहा होता है, उसी समय एक चमगादड़ उसकी कटोरी में गिर पड़ता है जिससे डर कर वह बेहोश हो जाता है। उसके बाद वहाँ की औरतों को चमगादड़ों में भूत-प्रेत एवं शैतान की छाया निहित होने का विश्वास हो जाता है। बिस्मिल्लाह जी ने अपनी कहानियों में अंधश्रद्धा को भूत-प्रेत, शैतान-चुडेल, जिन्न-खरम, जादू-टोना, तंत्र-मंत्र आदि रूपों में ही चित्रित किया है जिसे अंधविश्वासों का चित्रण भी कहा जा सकता है।

धार्मिक आडम्बर या कर्मकांड की समस्या

आधुनिकता, वैज्ञानिकता एवं शिक्षा के सर्वतोमुखी विकास व प्रसार के बावजूद भी धार्मिक आडम्बर और कर्मकांड आदि पूरी तरह से समाप्त नहीं हुए हैं। आज भी धर्म के क्षेत्र में असंख्य तरह के आडम्बर और कर्मकांड प्रचलित है। ईश्वर एवं धर्म के प्रति आस्थावान सामान्य व्यक्ति धार्मिक मान्यताओं, विश्वासों एवं आडम्बरों व कर्मकांडो आदि के मध्य विभेद नहीं कर पाता है, जिसका फायदा धर्म के नाम पर धंधा चलाने वाले उठाते हैं। बिस्मिल्लाह जी ने अपनी कहानियों में धार्मिक आडम्बरों और कर्मकांडों को भी उचित

स्थान दिया है। 'पुण्यभोज' नामक कहानी में हाजी कमरुद्दीन अपनी काली करतूतों को छिपाने के लिए खुदा के नाम पर भोज देने का आडम्बर करता है। उसे अपनी बिरादरी एवं नाते-रिश्तेदारों के बीच अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ानी है इसलिए जिंदगी भर चोरी-बेईमानी करने पर भी वह खुदा के नाम पर बिरादरी को पुण्यभोज खिलाना चाहता है। उसे लगता है कि इस पुण्यभोज के बाद जहाँ समाज में उसे सबाब हासिल होगा, वही अल्लाह भी उसके सारे गुनाहों को माफ कर देगा। इसी तरह 'तलाक के बाद' कहानी में तलाक के बाद भी साबिरा अपने पति से जुड़ी रहती है। उसके और उसके पति के बीच जबरदस्ती तलाक करवाया गया है जबकि पति- पत्नी साथ रहना चाहते हैं।

'पेड़' नामक कहानी में भी धार्मिक कर्मकांडों को उजागर किया गया है। गरीब बकरीदी को अपने बगीचे के एक पेड़ में हनुमान जी का दर्शन होता है। बकरीदी भोला-भाला है लेकिन भगवान के प्रति वह आस्थावान है। उसकी इसी आस्था का फायदा उठाकर ब्राह्मण पेड़ के तने पर उभरीबंदर की आकृति दिखाकर पेड़ को अपने आधिपत्य में कर लेते हैं।

साम्प्रदायिकता की समस्या-

वर्तमान समय में साम्प्रदायिकता धर्म के क्षेत्र में व्याप्त सर्वाधिक विकृत समस्या है जिसमें दो सम्प्रदायों या धर्मो के लोग अपने-अपने धर्म को उत्कृष्ट बताते हुए एक-दूसरे का गला काटने के लिए तत्पर रहते हैं। ये साम्प्रदायिक लड़ाईयाँ या दंगे प्रधानतः राजनीति से प्रेरित-प्रभावित होते हैं और इनमें निर्दोष लोगों को अपनी जान गंवानी पड़ती है। वोट बैंक की राजनीति लिए नेता धार्मिक दृष्टि से कुछ कट्टर लोगों को पैसा और सहयोग देकर दंगे करवाते हैं। एक-दूसरे के धर्म, आस्था, इतिहास और समाज आदि पर आरोप- प्रत्यारोप करने के कारण ये साम्प्रदायिक झगड़े छोटे रूपों में शुरू होते हैं लेकिन आरोप-प्रत्यारोप चलते रहने के कारण बहुत शीघ्र ही विकराल रूप धारण कर लेते है। इन झगड़ों के समाप्त

होने तक या प्रशासन द्वारा नियंत्रित किये जाने तक अनेक निर्दोष लोगों की हत्याएँ हो चुकी होती हैं, स्त्रियों-बच्चियों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जा चुका होता है, बस्तियाँ जल चुकी होती हैं। इसके बाद इन दंगों के कारण, इनमें शामिल होने वाले लोग, इनसे प्रभावित-अप्रभावित सम्प्रदाय, पीड़ितों को दिया जाने वाला मुआवजा, नेताओं की घटना स्थल पर उपस्थिति-अनुपस्थिति आदि को लेकर राजनीति आरम्भ होती है। ये दंगे कुछ दिनों तक टीवी चैनलों एवं अखबारों की सुर्खियाॅं बने रहते हैं लेकिन धीरे-धीरे वहाॅं से ये गायब हो जाते हैं। जो दंगा करता है और दंगा करवाता है वह तो साफ-साफ बच जाता है लेकिन इसमें जो निर्दोष लोग मारे जाते हैं, जिनके घर जलाये जाते हैं तथा जिन स्त्रियों और बच्चियों के साथ सामूहिक बलात्कार किया जाता है, उनके परिजनों कि स्थिति का अंशमात्र भी चित्रण यहाँ शब्दों के माध्यम से नहीं किया जा सकता है। बिस्मिल्लाह जी अपने समय समाज में होने वाले अनेक साम्प्रदायिक दंगो की स्थिति, उनके कारणों एवं परिणामों आदि के प्रत्यक्षदर्शी रहे हैं। हालाँकि उन्होंने साम्प्रदायिकता की समस्या को कहानियों की तुलना में अपने उपन्यासों में अधिक चित्रित किया है लेकिन उनकी अनेक कहानियों में हिंदू और मुसलमानो के बीच संघर्ष की स्थिति चित्रित हई है, जिसे साम्प्रदायिकता का छोटा रूप कहा जा सकता है।

'आधा फूल आधा शव' नामक कहानी में कब्रिस्तान की जगह को लेकर साम्प्रदायिक तनाव उत्पन्न होता है। पड़रौना के हिन्दू कब्रिस्तान को अपनी जमीन मानते हुए उसे मुसलमानो द्वारा जबरन कब्जा की गयी बताते है। यही आरोप पडरौना के मुसलमान हिन्दूओं पर लगाते हैं। दोनों सम्प्रदायों में तनाव बढ़ता है, एक जाहिल भीड़ इकट्ठा होती है जो कच्चे-पक्के घरों को तोड़ती हुई दीवार तोड़कर महाविद्यालय में घुस जाती है। इसी तरह 'दूसरा आदमी' शीर्षक कहानी में भी साम्प्रदायिकता की समस्या, इसके कारणो व स्वरूपों आदि का वर्णन किया गया है- "रहमत चाय वाले की दुकान पर परदेश की साम्प्रदायिकता को लेकर चर्चा चल रही हैं। देश में मुस्लिमों की बढ़ती आबादी को हिंदू लोग घटाना चाहते

है। रहमत चाय वाले की दुकान पर मुल्क के अहम प्रकरणों की बातें पूरी नहीं हो पाती हो लोग नुक्कड़ों पर जोर आजमाइश करते हैं। वहाँ का माहौल भी गर्म बनता है।..... उसे सफल बनाने के लिए मस्जिद में सुअर का गोश्त गिराया गया और उसे नापाक कर दिया गया। साथ ही किसी मंदिर में जली हुई घास दिखाई पड़ी जिसने भयानक अग्निकांड की कल्पना की जा सके। इससे एक जगह फसाद हुआ तो दूसरी जगह उसकी प्रतिक्रिया में फसाद होता है और आस-पास का वातावरण भीतर ही भीतर सुलगने लगता है।"

उपर्युक्त विवेचन-विश्लेषण के उपरांत कहा जा सकता है कि बिस्मिल्लाह जी की कहानियों धार्मिक चेतना सभी स्वरूपों तथा सभी संदर्भों में उपस्थित रही है। उन्होंने धार्मिक परम्पराओं, रूढ़ियों, रिवाजों, आडम्बरों तथा कर्मकांडों आदि सभी को अपनी कहानियों की कथावस्तु में सम्मिलित किया है। इस अनुक्रम में आस्तिकता, भाग्यवादिता, पूजा-पाठ, व्रत, नमाज, रोजा, हज मनौतियाँ, अंधविश्वास, आडम्बर, कर्मकांड, भजन-कीर्तन, बलिप्रथा, शुभ-अशुभ, भूत-प्रेत, जादू-टोना, मंगल-अमंगल, झाँड-फूँक, बाह्य आडम्बर, मंदिर-मस्जिदों में व्याप्त पाखण्ड धर्मांतरण, नारी शोषण, धर्म के नाम अस्पृश्यता एवं धर्म का ह्रास आदि सभी को बिस्मिल्लाह जी ने अपनी किसी न किसी कहानी में अनिवार्य रूप से अभिव्यक्ति प्रदान की है। ऐसे में कह सकते है कि उनकी कहानियों अंगभूत धार्मिक चेतना का आयाम अत्यधिक व्यापक तथा सर्वसमावेशी एवं समन्वयकारी प्रकृति का रहा है। उन्होंने जितनी निष्ठा के साथ अपने धर्म में व्याप्त विसंगतियों का यथार्थपरक शब्दांकन किया है उतनी ही निष्पक्षता और तटस्थता के साथ हिंदू धर्म की संकीर्णताओं को भी उजागर किया है। अशिक्षा, अज्ञानता एवं अर्थाभाव आदि को धर्मगत विसंगतियों की प्रादुर्भावक एवं पोषक मानते हुए बिस्मिल्लाह जी ने शिक्षा की प्रसारता, वैज्ञानिकता एवं तकनीकि विकास आदि को धार्मिक विद्रूपताओं का विनाशक बताया है। अपनी कहानियों में उन्होंने ग्रामीण जीवन में व्याप्त धर्मगत अंधता के चित्रण को सर्वोपरि रखा है तथा ग्रामीण स्त्रियों को धार्मिक विसंगतियों की सबसे बड़ी संरक्षक बताया है।

4.5 सांस्कृतिक चेतना का संरक्षण

अब्दुल बिस्मिल्लाह की कहानियों में धर्म की तरह ही संस्कृति संबंधी चेतना का भी पर्याप्त संरक्षण देखा जा सकता है। भूमण्डलीकरण, बाजारवाद, वैज्ञानिकता, तकनीकि विकास, औद्योगीकरण सूचना एवं संचार क्रांति आदि ने प्रत्येक स्तर पर भारतीय संस्कृति को किस हद तक प्रभावित किया है। इससे वे भलीभांति परिचित रह चुके हैं। इन्ही प्रभावों-परिवर्तनों को उन्होने अपनी कहानियों में अभिव्यक्ति प्रदान की है। बाजारवाद की संस्कृति ने भारतीय संस्कृति की आत्मा पर प्रहार करते हुए हमारे रहन-सहन, खान-पान, वेश-भूषा आदि को पाश्चात्य संस्कृति के अनुरूप बना दिया। पाश्चात्य संस्कृति के खुलेपन ने विश्वभर की संस्कृतियों को अपनी ओर आकर्षित किया है। भारतीय समाज रहन-सहन, खान-पान व वेश-भूषा आदि में औपनिवेशिक शासन के समय से ही पश्चिमी संस्कृति का अंधानुकरण करता रहा है। आजादी के बाद अनुकरण की यह प्रक्रिया और अधिक तेज एवं सरल हो गयी और इक्कीसवीं सदी के वर्तमान दौर तक पहुँचते-पहुँचते क्या हिन्दू, क्या मुस्लिम, क्या ग्रामीण, क्या बच्चे-बढ़े, क्या स्त्री पुरुष, क्या शहरीय खान-पान, वेश-भूषा एवं रहन-सहन आदि स्तरों पर हम गेहुआ अंग्रेज बन चुके हैं।

बिस्मिल्लाह जी ने अपनी कहानियों में भारतीय संस्कृति और पश्चिमी संस्कृति दोनों का चित्रण किया है। 'सिद्दकी साहब' नामक कहानी में कलक्टर साहब की वेशभूषा का चित्रण किया गया है जो मलमल का कुर्ता एवं सफेद पायजामा धारण किये दिखाई देते हैं। इसी तरह 'पूँजी माल और मुनाफा' नामक कहानी में बाबूजी उर्फ़ सलाम तुल्ला साहब की वेशभूषा का चित्रण किया गया है। वे पहले सरकारी बस में टिकट चेकर थे उनकी वेशभूषा कुछ इस प्रकार से दिखाई देती है- "काली पतलून, कालाकोट, कोट के भीतर काली धारियों

वाली सफेद कमीज। सिर पर काली टोपी, कमीज पर हरे रंग का स्वेटर। पाॅंव में पंपशू मोटा, थुलथुल बदन, सिर के बाल डाई किए हुए।"

'पुण्यभोज' नामक कहानी में बन्ने भाई अलीगढ़ी पैजामा, लखनवी कुर्ता तथा सिर पर दुपलिया टोपी पहने दिखाई देते हैं जबकि एकलाख मियां एलिफैंटा तथा दुरंगी बुशर्ट पहने नज़र आते हैं। इसी तरह से 'यह कोई अंत नहीं' नामक कहानी में हाजी गफूर सिर पर गोल जालीदार टोपी अंगुलियों में रंग बिरंगी अंगूठियां पहने दिखाई देते हैं।

'सालभर का त्योहार' कहानी में मास्टर साहब पजामा, ओपन शर्ट और रूमाल में नज़र आते हैं। इसी तरह से लंठ, रफ-रफ मेल, दुलहिन, जन्मदिन, कच्ची सड़क, कितने कितने सवाल तथा शीरमाल का टुकड़ा आदि कहानियों में मुस्लिम पुरुषों और स्त्रियों के द्वारा पहने जाने वाले वस्त्रों का उल्लेख किया गया है। दरअसल अपनी ज्यादातर कहानियों में बिस्मिल्लाह जी ने मुस्लिम पुरुषों तथा स्त्रियों को पारम्परिक वेशभूषा में ही दिखाया है। पुरुष जहा पैजामा, कुर्ता, लूंगी तथा शर्ट आदि वालों का उपयोग करते हैं वही स्त्रयाँ सलवार-कमीज और बुरका धारण करती हैं। आभूषण के रूप में पुरुष अंगूठी और घड़ी का प्रयोग करते दिखाई देते हैं जबकि कमरबंद, पायल आदि स्त्रियों का प्रमुख आभूषण रहा है। गले तथा भुजाओं में ताबीज स्त्री और पुरुष दोनों बांधते हैं।

वेशभूषा की तरह की बिस्मिल्लाहजी ने अपनी कहानियों में मुस्लिम समाज के परस्परागत खान-पान आदि का भी चित्रण किया है। 'सिद्दकी साहब' नामक कहानी में संयुक्त परिवार की प्रथा के साथ बिरियानी और मुर्ग मुसल्लम को परिवार का प्रमुख भोजन बताया गया है। 'पूँजीमाल और मुनाफा' कहानी में बाबूजी अंडों का आमलेट और दूध की स्पेशल चाय पीते हैं तथा खाने मे गोश्त के अलावा कुछ भी नहीं खाते हैं। 'अतिथि देवो भव' कहानी में बैंगन की सब्जी, आम के अचार एवं घी चुपड़ी हुई रोटियों का उल्लेख किया गया है।

इसी तरह 'दावत' कहानी में भी खाने के रूप में दाल, चावल, कीमा, अचार एवं रोटियों का जिक्र किया गया है। खान-पान की तरह ही अभिवादन भी भारतीय संस्कृति का एक प्रमुख अंग रहा है जिसका उल्लेख बिस्मिल्लाह जी की अनेक कहानियों में हुआ है। अलिया धोबी और पाव भर गोश्ता नामक कहानी में अलिया सलांवालेकुम तथा वालेकुमसलाम! कहकर लोगों का अभिवादन करता है। इसी तरह 'कागज वे कारतूस' शीर्षक कहानी में वसीउल्ला साहब का अभिवादन उनका दामाद जनाब वालिद साहब अस्सलाम अलैकुम कहकर करता है।

इसी तरह बिस्मिल्लाह जी ने अपनी कहानियों में विवाह संबंधी रीति-रिवाजों और प्रथाओं का भी वर्णन किया है। 'पुरानी हवेली' कहानी में हिन्दूओं की विवाह संबंधी रीतियों जैसे कि- वर की तलाश, विवाहगीत, जयमाल, प्रतिज्ञा, कन्यादान, पाणिग्रहण, लावा, परछन, भूमि की परिक्रमा अर्थात् फेरे लेना आदि विवाह संबंधी रीतियों का वर्णन किया गया है। 'लंठ' कहानी में मुस्लिम विवाह की रीतियों जैसे पांच कलमे पढ़वाना, निकाह कबूल करवाना तथा दुआ पढ़ना आदि का वर्णन किया गया है। बिस्मिल्लाह जी की कुछेक कहानियों में विवाह, नौटकी रामलीला तथा दशहरा आदि के समय गाए जाने वाले लोकगीतो की झलक भी मिलती है जबकि लोक संगीत, लोकनृत्य, आदि की उपस्थिति इनकी कहानियों में नगण्य रही है।

लोक नाट्य के रूप में इन्होंने 'यह कोई अंत नहीं' तथा 'दंगाई' शीर्षक कहानी में रामलीला का वर्णन किया है तथा सिद्दकी साहब एवं इन्द्रधनुष आदि कहानियों में धर्म संबंधी प्रचलित लोक कथाओं का चित्रण किया गया है। इन्द्रधनुष कहानी, में लज्जावती की कथा का जिक्र किया गया है। कुछेक कहानियों पर्व, त्यौहार एवं मेलो आदि का भी चित्रण किया गया है। इन त्योहारों और मेलों की प्रकृति अधिकांशतःधार्मिक रही है।

उपर्युक्त विवेचन-विश्लेषण के बाद निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि उपन्यासों की तरह ही बिलिल्लाह जी अपनी कहानियों में भी सांस्कृतिक चेतना के रूप में भारतीय संस्कृति को संरक्षण प्रदान किया है। यद्यपि उन्होंने उपन्यासों की तुलना मे अपनी कहानियों में सांस्कृतिक चेतना की वर्तमानता को अत्यधिक संकुचित रखा है लेकिन फिर भी यह वर्णन-चित्रण जितना भी है उतना ही पूर्ण है। रहन-सहन, खान-पान, वेशभूषा, आभूषण, अभिवादन, पर्व-त्योहार, मेले, रीति-रिवाज, प्रथाएँ लोकसंस्कृति आदि किसी भी सांस्कृतिक घटक को बिस्मिल्लाह जी ने अपनी कहानियों सें दूर नहीं रहने दिया है। भले ही इसका चित्रण कम हुआ हो, लेकिन हुआ अवश्य है। अतः कह सकते हैं कि बिस्मिल्लाह जी की कहानियों की सांस्कृति चेतना संस्कृति के प्रत्येक नए-पुराने घटक को स्पर्श करने में सफल रही है जिसके कारण उनकी कहानियाँ भारतीय संस्कृति का सम्यक संरक्षण करने में समर्थ रही हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ संख्या- 344

2. वही

3. वही

4. वही, पृष्ठ संख्या- 344-345

5. वही, पृष्ठ संख्या- 345

6. हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास, डाँ॰ लक्ष्मीनारायण लाल 'निवेदन' से उद्धृत

7. हिन्दी कहानी: परम्परा और प्रयोग, डॉ॰ हरदयाल, पृष्ठ संख्या- 18-19

8. फणीश्वरनाथ रेणु के साहित्य में लोकतत्व, डॉ॰ मालटी शिंदे, पृष्ठ संख्या- 195

9. वही

10. वही

11. वही पृष्ठ संख्या-194

12. वही

13. वही

14. हिन्दी कहानी : उद्भव विकास, सुरेश सिन्हा, अशोक प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 1967, पृष्ठ संख्या- 12

15. द न्यू शॉर्ट स्टोरी थ्योरीज, एडि°- चार्लेस ई मे, ओहियो यूनिवर्सिटी प्रेस, पृष्ठ संख्या- 73

16. कहानी का रचना विधान, संपादक- जगन्नाथ प्रसाद शर्मा, हिंदी प्रचार पुस्तकालय, वाराणसी, संस्करण-1961 पृष्ठ संख्या-10

17. कहानी: स्वरूप और संवेदना राजेन्द्र यादव, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, संस्काण- 2000, पृष्ठ संख्या- 26

18. द न्यू शॉर्ट स्टोरी थ्योरीज, एडि°- चार्लेस ई मे, ओहियो यूनिवर्सिटी प्रेस, पृष्ठ संख्या- 94-95

19. हिन्दी कहानी, उदभव और विकास, सुरेश सिन्हा, पृष्ठ संख्या- 1

20. वही पृष्ठ संख्या- 12

21. प्रेमचंद के श्रेष्ठ निबंध, संपादक- सत्यप्रकाश मिश्र, ज्योति प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण- 2003, पृष्ठ संख्या- 100-101

22. वही पृष्ठ संख्या- 103

23. फणीश्वर नाथ रेणु के साहित्य में लोकतत्व, डॉ०मालती शिंदे, पृष्ठ संख्या- 194-195

24. वही पृष्ठ संख्या- 195

25. रैनबसेरा (ज्ञानमार्गी), अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 144

26- अतिथि देवो भव (खाल खींचने वाला), अब्दुल बिस्मिल्लाह पृष्ठ संख्या- 56

27 टूटा हुआ पंख (क्रमश:), अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 63

28. रैनबसेरा (लफंगा), अब्दुल बिस्मिल्लाह है, पृष्ठ संख्या- 102

29. अतिथि देवो भव (अलिया धोबी और पाव भर गोश्त), अब्दुल बिस्मिल्लाह पृष्ठ संख्या- 13

30. वही, पृष्ठ संख्या- 125

31. रैनबसेरा (लफंगा), अब्दुल बिस्मिल्लाह है, पृष्ठ संख्या- 72, 60

32. कितने-कितने सवाल (तलाक के बाद) अब्दुल बिस्मिल्लाह पृष्ठ संख्या- 21

33. वही (दरबे के लोग) पृष्ठ संख्या- 33

34. वही (दंड) पृष्ठ संख्या- 71

35. अब्दुल बिस्मिल्लाह के साहित्य में संघर्षरत आम आदमी, डॉ॰ शेख शरफोद्दईन फक्रोद्दीन, पृष्ठ संख्या- 193

36. अतिथि देवो भव (पूजईमआल और मुनाफा), अब्दुल बिस्मिल्लाह पृष्ठ संख्या- 29